मूंमल प्रकाशन ग्रंथमाला— ३

जैसलमेर दिग्दर्शन

लेखक
दीनदयाल ओझा

मूंमल प्रकाशन
जैसलमेर

प्रकाशकीय

समस्त भारत के गणमान्य विद्वानों ने जिस सहज उदारता से मूमल प्रकाशन के 'राजस्थान का वासन्तिक पर्व गणगौर' और 'गौरी गीत संग्रह' को अपनाया उससे प्रकाशन को बहुत बड़ा बल मिला है।

भारतीय इतिहास, साहित्य, संस्कृति और कला का प्रमुख केन्द्र जैसलमेर सदियों से देशी विदेशी सभी विद्वानों का दर्शनीय स्थान रहा है। परन्तु इस क्षेत्र के विषय में अभी तक सम्यक जानकारी प्रस्तुत करने वाला एक भी छोटा बड़ा ग्रंथ कहीं से भी प्रकाशन में नही आया। इस अभाव की पूर्ती हेतु आप सभी विद्वानों के हाथों प्रकाशन का तृतीय ग्रन्थ चि० दीनदयाल ओझा का लिखा "जैसलमेर दिग्दर्शन" सौंप रहा हूँ।

'जैसलमेर दिग्दर्शन' के प्रकाशन मे जैसलमेर के स्थानीय एवं प्रवासी महानुभावो सर्वश्री सोहनसिंह भाटी, रामचन्द्र पालीवाल, किशोरीलाल आसेरा, काशीरामजी व्यास एवं श्रीज्ञानपासजी सेठिया, श्री किसनचन्दजी बोथरा, श्री भंवरलालजी कोठारी का जिस रूप में आर्थिक सहयोग मिला है उसके लिये मैं सभी महानुभावो का हृदय से आभारी हू। आशा करता हू भविष्य मे भी इसी प्रकार का आप सभी से सहयोग मिलेगा।

मांगीलाल ओझा

लेखक की ओर से

मेरे जन्म स्थान जैसलमेर ने विगत ऐतिहासिक काल के स्वर्णिम दिन देखे, राजाशाही के अत्याचारों से पीड़ित पालीवाल ब्राह्मणों का करुण क्रन्दन सुना और वैज्ञानिक युग के साधनों से अनलंकृत रह, अपने सुपुत्रों को प्रवास भेजकर अनमना भी रहा। परन्तु इस ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक और कलापूर्ण दर्शनीय नगर के विषय में देशी विदेशी सभी विद्वानों ने मुक्त कंठ से बहुत कहा है, बहुत लिखा है। उन सभी विद्वानों का आशीर्वाद प्राप्त करके एवं जैसलमेर के भू भाग का प्रत्यक्ष दर्शन करके मैंने जैसलमेर दिग्दर्शन प्रस्तुत किया है।

ग्रंथ की भूमिका के लिये मैं डा० वासुदेवशरण अग्रवाल एवं दो शब्द लिखने के लिये डा. रघुवीरसिंह, सीतामऊ का हृदय से आभारी हूं जिन्होंने अत्यधिक व्यस्त होते हुए भी भूमिका एवं दो शब्द लिखने की कृपा की है। माननीय श्री विद्याधरजी शास्त्री, श्री अगरचन्दजी नाहटा, एवं पं० हरीदतजी व्यास का भी आभारी हूं जिनकी प्रेरणा एवं मार्गदर्शन से यह ग्रन्थ पूर्ण हुआ है।

ग्रन्थ निर्माण एवं अलंकरण में मित्रवर श्री भगवानदत्त गोस्वामी एवं अनुज ब्रजरतन ओझा का जिस रूप में सहयोग मिला है तथा आर्थिक कठिनाइओं के होते हुए भी मूंमल प्रकाशन ने इसे प्रकाशित किया है, उन्हें भी धन्यवाद देना अपना कर्तव्य समझता हूं।

वाहेतियों का चौक
बीकानेर

दीनदयाल ओझा

भूमिका

"जैसलमेर" के मूंमल प्रकाशन की कार्यवाई से मैं अभी परिचित हुआ हूं। श्री माणकलालजी ओझा उसके संस्थापक है। जब श्री दीनदयाल ओझा ने 'जैसलमेर दिग्दर्शन' नामक लघु पुस्तक के लिये भूमिका लिखने का मुझे आमन्त्रण दिया तो मैंने उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया, क्योंकि मेरी बहुत दिनो से यह अभिलाषा रही है कि जैसलमेर का अच्छा परिचय प्राप्त करूं। जैसलमेर मेरे हृदय के एक कोने में बसता रहा है। मैं चाहता हूं कि मेरे अन्य देशबन्धु भी जैसलमेर के प्रति इसी प्रकार आकर्षित हो। यह नगर रेल से इस समय ७५ मील दूर है पर किसी समय यह राजस्थान का अभिन्न अंग था। मुझे जैसलमेर का प्रथम सांस्कृतिक परिचय वहा के जैन ताड़पत्रिय पुस्तकालय के द्वारा मिला था, जब मुनि पुण्य विजयजी ने वहां जाकर उन ग्रन्थो का उद्धार किया। हस्तलिखित ग्रन्थों का यह संग्रह आज भी भारत में अपूर्व है और इसका दर्शन तीर्थ-यात्रा के समान पवित्र माना जा सकता है।

ओझाजी की यह पुस्तक सीमित होते हुए भी जैसलमेर की सूचनाओं का भण्डार है। इसमे उन्होंने जैसलमेर की वास्तुकला और मन्दिरों का उत्तम परिचय दिया है। यह जैनियों का तीर्थस्थान है। जैसलमेर नगर की स्थापना यदुवंशी भाटी महारावल श्री जैसलजी

ने वि. सं. १२१२ में की थी। इसका प्राचीन नाम वल्लमंडल या वल्ल देश था। दुर्ग में कई दर्शनीय विशाल जिनालय और मूलनायक पार्श्वनाथ का मन्दिर है। मन्दिर का मंडप अत्यन्त कलापूर्ण है और यहां की स्थापत्य कला की बारीक कोरनी को चित्र में देख कर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। जैसलमेर से १० मील पर स्थित प्राचीन राजधानी लोद्रवा का कलापूर्ण तोरण बहुत ही विशिष्ट है। वस्तुतः पूरे जैसलमेर के वास्तु और स्थापत्य पर एक पूरा सचित्र ग्रन्थ राजस्थान पुरातत्व विभाग की ओर से प्रकाशित होना चाहिये। मैं अपने मित्र सत्यप्रकाशजी का विशेष ध्यान इस ओर आकर्षित करता हूं। जैन मन्दिरों के अतिरिक्त श्रीलक्ष्मीनाथजी का वैष्णव मन्दिर भी उत्तम कहा जा सकता है। प्राचीन हवेलियों और देवालय एवं उपाश्रय की शिल्प-कला वस्तुतः सब तरह से देखने योग्य है। जैसलमेर में कई राजप्रासाद भी दर्शनीय हैं जिनमें बादल विलास किसी ऊंचे मनस्वी शिल्पी की कल्पना है। कई बारीक काम के झरोखे भी भारतीय शिल्प में अपना स्थान रखते हैं। जैसलमेर की चित्रकला भी उल्लेखनीय थी। राजप्रासादों की भित्तियों पर भी अनेक चित्र अंकित हैं।

जैसलमेर के भूप्रदेश में प्राप्त सैकड़ों देवालय, अन्य कलात्मक अवशेष मूर्तियों, चित्रों और हस्तलिखित ग्रन्थों का संरक्षण समय रहते किया जाना चाहिये। प्राचीन भारतीय संस्कृति की जो मूल्यवान सम्पदा अभी तक यत्र मौजूद है उसके संरक्षण के प्रति सक्रिय प्रयत्न राजस्थान और केन्द्रीय शासन का आवश्यक कर्तव्य है।

श्री दीनदयाल ओझा ने जो कुछ इस पुस्तिका मे लिखा है उसके स्वरों का महत्व हमें स्वीकार करना चाहिये और तद्‌नुसार भारतमाता के इस भूले हुए अंचल के प्रति अपने कर्तव्य से उऋण होना चाहिये। ईश्वर से प्रार्थना है कि शीघ्र ही इस आवश्यकता की पूर्ति राजस्थान के वर्तमान राजनैतिक और साहित्यिक नेताओं द्वारा की जाय।

'जैसलमेर' की गौरव गाथा के साथ उसका एक दुःख भरा भी पक्ष है और वह है वहा-पूरे प्रदेश में जल का अभाव। इसके कारण वहां के मनुष्य नर कंकाल बने हुए है। वहां का मानव गहरी उसास छोड़ता हुआ भाग्य पर निर्भर बन गया है। उसका दुखड़ा सुनने वाला आज कोई नहीं है। चौथी योजनाओं मे केन्द्रीय शासन और राजस्थान शासन को जैसलमेर की पुकार सुनना ही चाहिए। यह मानवीय चीत्कार उस अमृत के लिये है जिसे जल कहते हैं। इसके लिए कई वर्ष पूर्व एक कमेटी बनी थी, जिसमे श्री देवर भाई और श्री गङ्गा-शरणसिंह थे किन्तु उसका काम ठप हो गया और जैसलमेर का दुखड़ा ज्यो का त्यों बना रहा। एक पातालफोड कुंआ बनाने में और चार इन्च का नल गड़ाने मे आजकल लगभग ५० हजार रुपये का व्यय बैठता है, ऐसा हमने सुना है। जैसलमेर को न्यूनतम एक हजार पातालफोड़ कुंए चौथी योजना में मिलने चाहिये। हो सकता है कुछ अभावग्रस्त स्थानोंपर ६ इन्ची या १० इन्ची तक के नल गड़ाने पड़े। राजस्थान के धनी-मानी पुत्रो से एक-एक नलकूप का दान मागना चाहिये। इस युग में मानव का दुःख भाग्य से नही, मानव को ही दूर

दो शब्द

यह जानकर पूर्ण प्रसन्नता हुई कि मूंमल प्रकाशन "जैसलमेर दिग्दर्शन" ग्रंथ प्रकाशित कर रहा है। समूचे देश और समाज को ठीक तरह से जानने और समझने के लिये यह अत्यावश्यक है कि देश और समाज के सारे विभिन्न भागों और अंगो के बारे मे सारी आवश्यक जानकारी सुलभ तथा सुज्ञात हो। भारतीय मरुस्थली मे स्थित जैसलमेर का प्रदेश अब तक हर तरह से उपेक्षित ही रहा है। विदेशो के साथ व्यापार तथा आवागमन का सुगम सीधा समुद्री रास्ता खुल जाने के बाद जैसलमेर होकर निकलने वाला थल का व्यापार मार्ग बंद हो गया, जिससे जैसलमेर का तदन्तर कोई विशेष महत्व रह नही गया था। परन्तु आज यह प्रदेश राजस्थान का एक अतीव महत्वपूर्ण सीमांत प्रदेश है। अतः जैसलमेर की ओर पुनः ध्यान आकर्षण होना स्वाभाविक ही है। ऐतिहासिक दृष्टि से ही नही समाज-विज्ञान तथा भूगर्भ शास्त्र की दृष्टि से भी जैसलमेर प्रदेश तथा वहां के जन समाज का गहराई के साथ विधिवत् अध्ययन अभी होना है। बालू के उन टीबो के नीचे किस प्राचीनतम सभ्यता के अवशेष दबे पड़े है और उस धरती मे हजारो फुट नीचे कौन २ सी खनिज संपति अथवा कितना तेल अज्ञात दबे पड़े है इसकी खोज अभी होनी है। सिंध की राह से होते वाले मुसलमानी आक्रमणो के दबाव के फलस्वरूप भाटी राजपूतों

मान्य विद्वानों की सम्मतियाँ

"जैसलमेर दिग्दर्शन" मूंमल प्रकाशन का तृतीय प्रकाशन है। राजस्थानी संस्कृति एवं सन्तवाणी के जन्मसिद्ध उपासक श्री दीनदयाल ओझा ने इस दिग्दर्शन में जैसलमेर का जिस रूप में चित्रण किया है वह संक्षिप्त होकर भी सर्वांगपूर्ण एवं अपने प्रयास में सर्वथा सफल है।

मेरा विश्वास है कि भारत के सांस्कृतिक क्षेत्र मे इस पुस्तक का आदर होगा और इसमें जैसलमेर की प्राचीन झांकी प्रत्यक्ष रूप में पाठकों के सन्मुख प्रस्तुत होगी।

पुस्तक की छपाई, सफाई, सुन्दर और इसके चित्र आकर्षक है।

विद्याधर शास्त्री
डाइरेक्टर
हिन्दी विश्व भारती
बीकानेर

श्री दीनदयाल ओझा ने जैसलमेर की जानकारी के रूप में जैसलमेर दिग्दर्शन नामक पुस्तक प्रकाशित की है वह अपने विषय की उपयोगी और महत्वपूर्ण पुस्तक है। आवश्यक चित्रों को देकर इसकी उपयोगिता और भी बढा दी है। आशा है इससे जैसलमेर को आने वाले व्यक्तियों को काफी सुविधा होगी।

जैसलमेर राजस्थान का प्राचीन और उल्लेखनीय प्रदेश है, यहां साहित्य और कला का अदभुत संगम दिखाई देता है। यहा के

तथा उनके सहयोगियों को, कब, किस ओर कहां तक पूर्व की ओर आगे बढ़ना पड़ा, तथा मुसलमानी समाज के सदियों तक के निकट संसर्ग का जैसलमेर प्रदेश के राजपूतों के समाज, धार्मिक परंपराएँ आचार विचार आदि पर क्या-क्या, कहां तक और क्या २ प्रभाव पड़ा इसका पूरा-पूरा अध्ययन अभी होना है। ये अध्ययन भारतीय समाज तथा इतिहास के विकास संबंधी अब तक सुमान्य अनेकानेक धारणाओं में बड़े उलट फेर करने वाले प्रमाणित होंगे यह सुनिश्चित है। ऐसी स्थिती में आज प्रस्तुत "जैसलमेर दिग्दर्शन" उनका एक प्रेरणापूर्ण आह्वान मात्र ही है। यों इस प्रदेश की परिस्थितियों, समस्याओं तथा संभावनाओं को अधिक सुस्पष्ट करने में अवश्य ही यह दिग्दर्शन सहायक होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। अत मैं इसका स्वागत करता हूं और आशा करता हूं कि अपने २ विषयों के विशेषज्ञ इस महत्त्वपूर्ण तथापि अब तक बहुत कुछ उपेक्षित प्रदेश के बारे में आवश्यक खोज बीन तथा अध्ययन के लिये इससे प्रेरित होंगे। श्री दीनदयाल ओझा धन्यवाद के पात्र है कि उन्होंने इस दिशा में प्रारंभिक प्रयत्न द्वारा यह "जैसलमेर दिग्दर्शन" प्रस्तुत किया है।

रघुबीर निवास
सीतामऊ (मालवा)

डा० रघुबीरसिंह

मान्य विद्वानों की सम्मतियाँ

"जैसलमेर दिग्दर्शन" मूंमल प्रकाशन का तृतीय प्रकाशन है। राजस्थानी संस्कृति एवं सन्तवाणी के जन्मसिद्ध उपासक श्री दीनदयाल ओझा ने इस दिग्दर्शन में जैसलमेर का जिस रूप मे चित्रण किया है वह संक्षिप्त होकर भी सर्वांगपूर्ण एवं अपने प्रयास मे सर्वथा सफल है।

मेरा विश्वास है कि भारत के सांस्कृतिक क्षेत्र मे इस पुस्तक का आदर होगा और इसमे जैसलमेर की प्राचीन झांकी प्रत्यक्ष रूप मे पाठको के सम्मुख प्रस्तुत होगी।

पुस्तक की छपाई, सफाई, सुन्दर और इसके चित्र आकर्षक है।

विद्याधरशास्त्री
डाइरेक्टर
हिन्दी विश्व भारती
बीकानेर

श्री दीनदयाल ओझा ने जैसलमेर की जानकारी के रूप मे जैसलमेर दिग्दर्शन नामक पुस्तक प्रकाशित की है वह अपने विषय की उपयोगी और महत्वपूर्ण पुस्तक है। आवश्यक चित्रो को देकर इसकी उपयोगिता और भी बढा दी है। आशा है इससे जैसलमेर को आने वाले व्यक्तियों को काफी सुविधा होगी।

जैसलमेर राजस्थान का प्राचीन और उल्लेखनीय प्रदेश है, यहाँ साहित्य और कला का अदभुत संगम दिखाई देता है। यहा के

कलापूर्ण मंदिर, देवालय आदि स्थान दर्शकों को सहज ही अपनी ओर आकर्षित कर लेते है। प्राचीन ताड़ पत्रीय व कागज़ की प्रतियां तो यहां की विश्व विख्यात हो चुकी है। अभी तक इतनी प्राचीन प्रतियां अन्यत्र कहीं भी सुरक्षित नहीं रह सकी। आज चाहे जैसलमेर सूना प्रदेश नजर आय पर यहाँ का इतिहास अवश्य ही गौरवशाली है। यहां के गौरव की कुछ झांकी श्री ओझा के प्रस्तुत ग्रंथ से पाठकों को अवश्य मिल सकेगी।

अगरचन्द नाहटा

डाइरेक्टर

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट

बीकानेर

अनुक्रमणिका

समर्पण

जैसलमेर के समस्त निवासियों, प्रवासियों, एवं गणमान्य
विद्वानों को जिनके सहयोग एवं आशीर्वाद से
जैसलमेर दिग्दर्शन
प्रस्तुत कर पाया हूं।

जैसलमेर दिग्दर्शन
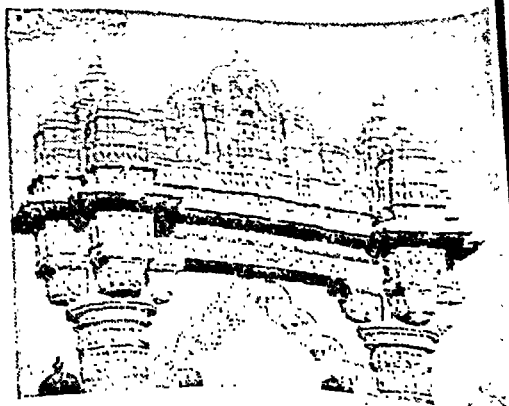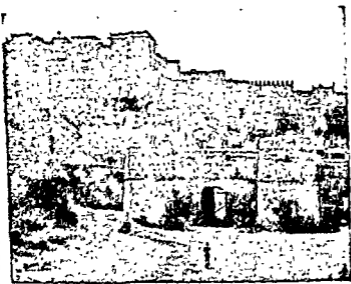
जैसलमेर दिग्दर्शन

जैसलमेर की स्थिति, सीमा और विस्तार

जैसलमेर राजस्थान के पश्चिमी भाग में स्थित है। इसके उत्तर में पाकिस्तान का भावलपुर, पूर्व मे बीकानेर व जोधपुर, दक्षिण मे जोधपुर व पाकिस्तान का कुछ भाग और पश्चिम मे पाकिस्तान का मक्खर और खैरपुर हैं। इस प्रकार जैसलमेर उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम तीन ओर पाकिस्तान से घिरा हुआ है। अनुमानतः जैसलमेर से ६०-७० मील दूर पाकिस्तान की सीमा लग गई है और यह सीमा ३५० मील लंबी है। यह २६ अंश ४ कला और २८ अंश २३ कला उत्तरांश तथा ६८ अंश ३० कला और ७२ अंश ४२ कला पूर्व रेखांश के बीच फैला हुआ है। इसका क्षेत्रफल १६०६२ वर्गमील तथा लंबाई उत्तर से दक्षिण तक १३६ मील और चौड़ाई पूर्व से पश्चिम तक २७० मील है।

पुरातन शिला लेखो में इसका नाम "माडधरा" और वल्लदेश (वल्लमंडल) भी मिलता है। परन्तु प्रथम नाम माडधरा विशेष प्रसिद्ध रहा है और आज भी यह क्षेत्र इस नाम से पहिचाना जाता है। इस भाग का नाम महारावल जैसल जी के पश्चात् जैसलमेर पड़ा। इससे पूर्व जैसलमेर की राजधानी "लोद्रवा" थी जो जैसलमेर से १० मील पश्चिम की दूरी पर है।

इस जिले का पश्चिमी भाग रेतीला है तथा शेष [illegible] पहाड़ियों [illegible] है। मुख्य शहर जैसलमेर [illegible] के शेष में [illegible] पहाड़ियों [illegible] है।

स्थिति की दृष्टि से जैसलमेर का जितना महत्व पहिले उससे भी आज अधिक बढ़ गया है। यही कारण है कि पिछले दि[illegible] एक राजनीतिज्ञों ने इस सामान्य नगर को "काश्मीर" से उपमा दी [illegible] कर्नल टाड ने राजस्थान के इतिहास के भाग २ के पृष्ठ [illegible] जैसलमेर राज्य और अंग्रेज सरकार के बीच होने वाली संधि के लि[illegible] में लिखा है :—

"अन्य देशवाले भारत पर आक्रमण करने का विचार करते हैं अरब से आने वाले जलमार्ग द्वारा समुद्र के किनारे सरलता से आ[illegible] इस स्थान से भारत को जीत सकते है। इन्हीं विदेशियों का भारत पर आक्रमण दूर करने के लिये हमको जैसलमेर का अधिकार बड़ा ही सुखदाई होगा। कारण कि हम जैसलमेर प्रदेश के उत्तर सिंध में जाकर सहज ही में अपनी सेना को वहाँ तक ले जा सकते हैं और भारत में आने वालों को पहिले से ही भली भांति रोक सकते हैं।"

आज हमारा देश स्वतंत्र है और स्वतंत्र देश का यह एक सीमान्त प्रदेश है अतः स्थिति की दृष्टि से आज इसका महत्व पहिले से भी अधिक है।

प्राकृतिक दशा

जैसलमेर के विशाल भूभाग को मोटे तौर पर हम निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं :—

१. उत्तरी पश्चिमी रेगिस्तान
२. मध्य पर्वतीय प्रदेश (मध्य पठारी प्रदेश)
३. दक्षिणी पूर्वी मैदान

(१) उत्तरी पश्चिमी रेगिस्तान :-

यह संपूर्ण भाग करीब करीब रेगिस्तान है। कहीं कहीं पर मैदान तथा छोटी छोटी पहाड़ियां भी दिखाई देती हैं। इस भाग में थोड़ी सी वर्षा होने पर बाजरा, मूंग, गवार, तिल, मोठ तथा कहीं कहीं "खडीनों" में गेहूं अच्छा उत्पन्न होता है। अनाज के अतिरिक्त इस रेतीली भूमि में घास के साथ "तूम" भुरट और सोणा अधिक उत्पन्न होता है जो चौपायों के काम आता है। अकाल पड़ने पर इस भाग के निवासी तूम के बीजों को मीठा करके तथा भुरट व "लोणों" की रोटी खाकर जीवन निर्वाह करते हैं।

इस भाग में भेड़ों एवं गायों की संख्या अधिक होने के कारण ऊन तथा घी का व्यापार अच्छा होता है। विशेष आबादी ऊनड़

मुसलमानों की है जो कभी राजपूत थे। आज भी ऊमड़ राजपूतों की बस्ती इस भाग में है। ये मुसलमान घोड़े रखने के शौकीन, घुटनों तक लंबा कसीदेदार चोला तथा सिर पर सफेद साफा पहिनते हैं। इनकी औरतें घर के काम धंधों के साथ-साथ खेती का भी काम करती हैं तथा ऊन कातने एवं कसीदा निकालने में बड़ी कुशल होती हैं। ये स्त्रियां गहरे कत्थाई रंग की ओढ़नी तथा नीला-नीला घाघरा और तरह तरह की कांचली पहनती हैं। पावों में जरीदार जूते इन्हें बहुत प्रिय होते हैं जो गांवों में ही बनाये जाते हैं। उनके वस्त्रों पर विभिन्न प्रकार के कसीदे का काम किया हुआ होता है तथा उनमें गोल गोल छोटे कांच के टुकड़े लगे रहते हैं। इस भाग के निवासियों की बोली सिन्ध की बोली से मिलती जुलती है।

रेगिस्तान होने से इस भाग का जलवायु गर्मियों में गर्म तथा सर्दियों में अधिक ठंडा रहता है। गर्मियों की ऋतु में इस भाग में पानी कठिनाई से प्राप्त होता है। पानी प्राप्त करने के लिये यहाँ के निवासियों को १०-१० मील की दूरी से पानी लाना पड़ता है। वर्षा इस भाग में अत्यधिक कम होती है। वृक्षों में जाळ, खेजड़ा, फोग, आक, कैर, प्रमुख हैं। रामगढ़ में पेट्रोल भी प्राप्त हो गया है।

इस भाग में निम्नलिखित गांवों की गणना की जा सकती है:—

१. रामगढ़	२. खुइयाळा	३. किशनगढ़	४. तनोट
५. घोटड़ू	६. बूयली	७. मयाजलार	८. शाहगढ़

(२) मध्य पठारी प्रदेश

जैसलमेर के आस-पास ४० मील गोलाकार क्षेत्र में अनेकों

छोटी २ पहाड़िया है। यह भाग सारे जैसलमेर के मध्य मे स्थित तथा पहाड़ी होने के कारण इसे मध्य पर्वतीय प्रदेश अथवा मध्य पठारी प्रदेश कहा गया है। यहां के निवासियों का ऐसा विश्वास है कि इन पहाड़ियों की गोद में अनेक प्रकार के बहुमूल्य खनिज पदार्थ लोहा, कोयला, मिट्टी का तेल, पत्थर, विविध प्रकार की रग विरगी मिट्टिया प्राप्त होने की पूरी सभावना है। इन पहाड़ियो की ढलान मे अनेकों अच्छे तालाब व विशालकाय बांध बने हुए है जिनमे वर्षा ऋतु मे इन पर मे पानी लुढक कर आता है। जहां तालाब नही है वहा इन पहाडियों का पानी मैदान में चला जाता है जिससे विभिन्न प्रकार की घास उत्पन्न होती है। यही भाग वास्तव मे अत्यधिक उपजाऊ और सुन्दर चरागाह भी है। इन बांधो के भर जाने पर हजारों मन गेहूँ, जवार और चना उत्पन्न होता है। इन बाधों के अतिरिक्त समतल भूमि में ४ ५ इञ्च वर्षा होने पर बाजरा, मूंग, मोठ, गवार, तिल, मतीरा, काकड़ी आदि उत्पन्न होते हैं।

इस भाग का जलवायु गर्म तथा तर है। सदियो में सर्दी तथा गर्मियो मे गर्मी विशेष पडती है। वर्षा इस भाग मे अच्छी होती है। अत. इस भाग की समस्त भूमि उपजाऊ है। बड़ी बड़ी बरसाती नदियां इसी क्षेत्र मे से बहती हैं।

इस भाग में उत्पन्न होने वाले वृक्षो मे से आम, जामुन, अमरूद, गूंदी, बोरटी, जाळ, लवा, फोग, कूंमट, खेजड़ा, बावळ, गूगलान, नीम, बड़, पीपळ, गूलर, सरेस आदि प्रमुख हैं। जगली पशु हिरण, लोकी, गीदड़, जंगली गाय, तीतर, बटेर आदि जगली जीव घूमा करते हैं।

यहां के निवासियों का मुख्य व्यवसाय पशुपालन, व्या॰ व खेती है। मुख्य शहर जैसलमेर इस भाग के मध्य में आने के कारण व्यापार भी अच्छा होता है। ग्रामवासी गाय, वैल, घोड़ा, ऊंट, भेड़, बकरी तथा, भेंस रखते हैं। ये लोग गायों का घी तथा भेड़ों की ऊन को एकत्रित करके वेचते हैं। भील आदि लोग गूगलान का गूगल तथा कूंभट का गोंद वेचा करते हैं। यहां का गूगल सारे भारत में विख्यात है। यहां के मैदानों में सेवण नामका घास अधिकता से उत्पन्न होता है जो गायों के लिये बहुत ही लाभप्रद होता है। देवा गांव में "खेवाई" नाम का घास उत्पन्न होता है जो घोड़ों के लिये बहुत ही पौष्टिक होता है। यही कारण था कि भूतपूर्व जैसलमेर सरकार के घोड़े यहीं रखे जाते थे। इस भाग के गांवों में ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र तथा राजपूत चारों कौमें रहती हैं। जिनकी वेषभूषा तथा बोली मुख्य शहर से मिलतीजुलती न होकर गंवारूपन लिये हुए है।

मोटे तौर पर उक्त भाग में निम्नलिखित गांवों का समावेश किया जा सकता है :—

जैसलमेर, देवा, मोहनगढ का कुछ भाग, सम, काठोड़ी, वासण पीर, खींया, मंघा, बरमसर, लोद्रवा आदि।

(३) दक्षिणी पूर्वी मैदान :-

दक्षिणी पूर्वी मैदान संम्पूर्ण जैसलमेर में अधिक आबाद सरसब्ज एवं घनी आबादी वाला है। समस्त अच्छे-अच्छे गांव इसी भाग में स्थित हैं।

इस भाग मे अनेको वर्षाती नदिया बहती है। इन नदियो को
रकर जहां बांध (खड़ीन) बनाये गये हैं, वहा पर गेहूँ, चना, जवार की
ती होती है। अतिरिक्त भूमि मे बाजरा, मूंग, मोठ, गवार, तिल,
निया, जीरा इत्यादि वस्तुएं उत्पन्न होती है। इस भाग की गोचर-
मि मे "सेवण" नाम का घास होता है जो चौपायो के लिये विशेष
भदायक है। वृक्षों में यहा खेजडा, कूंभट, जाळ, बोरटी, गूंदी,
वूल, आक, सरेस, विशेष देखने को मिलते हैं। जानवरों मे रोज,
अर, हिरण, खरगोश, लोमड़ी, सँ प्रमुख हैं।

यह भाग उपजाऊ होने तथा आस पास मे अच्छे २ गाव होने के
कारण व्यापार की दृष्टि से बड़ा महत्वपूर्ण है। यहां के गावो मे ऊन
और घी का व्यापार बहुत अच्छा होता हैं।

यहा के निवासियों की वेश भूषा करीब २ शहरवालों के समान
ही है और मुख्य धंधा व्यापार तथा खेती हैं। खनिज पदार्थो मे पत्थर,
नमक, मिट्टी और चूना प्रमुख हैं।

इस क्षेत्र में निम्नलिखित गाव विशेष उल्लेखनीय है :—

१. देवीकोट, २ फतहगढ, लाठी, लखा, पोकरन आदि।

●

जलवायु

यहां की जलवायु शुष्क व गर्म होते हुए भी स्वास्थ्यकर है। वाहिर से आने वाले समस्त महानुभावों ने यहां के जल की मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। आज भी अनेकों स्थानों के व्यक्ति यहां जलवायु वदलने को आते हैं और निरोग होकर लौटते हैं इसी जलवायु के कारण यहां के निवासी सुन्दर, निरोग तथा वलिष्ट हैं। यहां गर्मियों में गर्मी तथा सर्दियों में सर्दी विशेष पड़ती है।

यहाँ की हवा में यह एक विशेषता और है कि वाहर से आ वाली पनडी यहाँ आते ही सुगंधी वाली हो जाती है और यहीं से लि अन्य भागों के लोग ले जाते हैं।

यहाँ का तापमान ६४° से ११५° के मध्य रहता है। मई, जू और जुलाई में गर्मी तथा आधे नवम्बर से फरवरी के अन्त तक ठ पड़ती है। वर्षा ऋतु यहाँ की वड़ी सुहावनी होती है।

वर्षा :-

जैसलमेर जिला मानसूनी हवाओं के मार्ग से वाहिर स्थित होने से यहां वर्षा वहुत कम होती है। यह भाग प्राय सूखा ही रहता है। यहाँ जंगल न होने के कारण से भी वर्षा कम होती है।

यहाँ पर जून, जुलाई तथा अगस्त में वर्षा होती है। पिछले १० वर्षों मे यहाँ वर्षा की औसत ६ इन्च है। इसके पूर्व ७ इन्च थी। यहाँ सबसे अधिक वर्षा का वर्ष १८६३ माना जाता है। उस वर्ष १५·२४ इन्च वर्षा हुई थी। सबसे कम वर्षा का वर्ष १८६६ माना जाता है जिसमे केवल २६ सेंट वर्षा हुई थी।

पहाड़ :—

संपूर्ण जैसलमेर मे एक भी पहाड़ ऐसा नहीं है जो ३५० फीट से अधिक ऊँचा हो। मुख्य नगर जैसलमेर के आस पास ४० मील के घेरे मे अनेक पहाड़ियाँ हैं, जिनकी ऊँचाई २०० फीट से ३५० फीट तक है। ये छोटी २ पहाड़ियाँ दक्षिण में रामगढ़, और पश्चिम मे खुड़याला तक चली गई है। इन पहाड़ियों को यहाँ के निवासी "मगरा" तथा "डूंगर" कहते हैं। इनकी तलहटी मे अनेकों तालाब तथा बांध बने हुए हैं। यहाँ के निवासियों का पूर्ण विश्वास है कि इन पहाड़ियों का सर्वेक्षण कराया जाय तो अनेकों बहुमूल्य खनिज प्राप्त हो सकते हैं। वर्षा ऋतु में इन पहाड़ियो से पानी की धाराएँ निकलती है जो बड़ी बड़ी वर्षाती नदियो का रूप धारण कर लेती हैं। वास्तव मे ये पहाड़ियाँ जैसलमेर के लिये प्रकृति की बहुमूल्य देन है।

मैदान :—

जैसा कि आगे कहा गया है कि जैसलमेर के आस पास ४० वर्ग मील के क्षेत्र मे रेत के टीले नहीं है, बल्कि छोटी-छोटी पहाड़ियाँ है। इन पहाड़ियों की तलहटी में सारा मैदान ही है। विशेषकर दक्षिणी-पूर्वी हिस्सा मैदान है। संपूर्ण जैसलमेर में यही भाग अधिक

उपजाऊ और अच्छे चरागाह वाला है। इस मैदान में, सेवण, मंकड़ भुरट, सेवाई आदि नाना प्रकार की घास उत्पन्न होती है। खासकर खेती तथा पानी की सुविधा होने के कारण यह मैदानी भाग अन्य भागों से अधिक बसा हुआ है। पशुओं की संख्या भी इस भाग में सबसे अधिक है।

वर्षा ऋतु मे बहने वाली संपूर्ण नदियाँ इसी मैदान में से होकर बहती हैं।

वृक्ष :—

यहाँ के जंगलों में उत्पन्न होने वाले वृक्षों में खेजड़ा, रोहीड़ा नीम, फोग, गूंदी, गूगलान, बोरटी, सरेस, पीपल, केर, आक, बैर, जाल हिंगोर, लवा, कूंभट तथा बबूल है। कूंभट तथा बबूल के वृक्षों से गोंद तथा गूगलान से गूगल प्राप्त होता है। अमरसागर, मूलसागर, बड़ा बाग आदि के बगीचों में आम, अमरूद, जामुन, गूलर, खजूर, संतरा करूंदा, नींबू, खिरणी, बड़, कदंब, फूलझड़ी के पेड़ भी बहुत है। फूलों के पौधों में गुलाब, चमेली, गेंदा, मोगरा, कदंब, केतकी, आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। इन वृक्षों से लकड़ी भी प्राप्त होती है तथा खेजड़ा, कैर, गूंदी और फलों के वृक्षों से नाना प्रकार के साग व फल प्राप्त होते हैं।

पशु :—

जैसलमेर के चौपाए पशुओं में सबसे महत्वपूर्ण पशु गाय और ऊंट है। यहाँ के मोहनगढ, खुइयाला, शाहगढ आदि गांवों के ऊंट बहुत ही सुन्दर तथा चलने में तेज होते हैं। इन ऊंटों की कीमत ५००) से

हजार तक होती है। गाय, भैंस, भेड़, बकरी, घोड़ा पालतू जानवरों में विशेष रखे जाते हैं। देवा परगना के घोड़े नागौर के बैलों की तरह ही बलिष्ट तथा चलने में बहुत ही तेज होते हैं। इनके कानों की बनावट बड़ी सुन्दर होती है। जंगली पशुओं में नीलगाय, चीते, बाघ, हिरण, खरगोश, सूअर, गीदड़, भेड़िया, अधिक संख्या में हैं। यहाँ ग्रामवासियों का तो जीवन ही गाय, ऊंट, भेड, बकरी पर ही निर्भर हैं।

नदियाँ

जैसलमेर जिले में एक भी नदी ऐसी नहीं है जो वर्ष भर बहती रहती हो। परन्तु मुख्य नगर जैसलमेर के चारों ओर वर्षा ऋतु में बहने वाली अनेक बड़ी नदियाँ हैं जिनका पानी बहता हुआ सुदूर रेगिस्तान में लोप हो जाता है। अगर इन नदियों के पानी का उचित ... किया जाय तो वह भाग काफी हरा-भरा हो सकता है। इस भाग में बहने वाली निम्नलिखित वर्षाती नदियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं :—

१. काकनय
२. लाठी की नदी
३. चांधन की नदी
४. धउवा व जियाई की नदी
५. गोगडी

(१) काकनय :–

गांव भोपा से सोढा, कोठड़ी, गोरारा और सता के पास बहती हुई २८ मील दूर कुलधर से यह नदी दो धाराओं में बदल जाती है। एक धारा पश्चिम में खाभा तथा वुज के खेतों में गिरती है, दूसरी धारा गांव कुलधर से गांव काहला व लोद्रवा से होकर रन में गिरती है।

जहाँ पानी खारा होकर खेती तो क्या घास उत्पादन योग्य भी नहीं रहता। पहिले जब पालीवाल ब्राह्मण बुज और मुहार में निवास करते थे उन दिनों इसी नदी के पानी से बुज में १५ व मुहार में ६ हजार मन बीज बोया जाता था।

वि० सं० १८१३ मे इस नदी के पानी को खेती के उपयोग मे एवं गड़ीसर, गुलाबसागर तालाब में डालने के लिये ६५ हजार रुपए खर्च किये थे। परन्तु वि० सं० १८१६ में अधिक वर्षा होने के कारण सब बांध टूट गये क्योंकि जैसलमेर सरकार ने उक्त कार्य को हाथ मे नही लिया। आज इस नदी के व्यर्थ जाने वाले पानी का सदुपयोग किया जाय तो हजारों कृषकों को जीवनदान मिल सकता है और देश का उत्पादन बढ़ सकता है।

इस नदी के किनारे ब्रह्मा के पुत्र काक ऋषि ने तपस्या की थी अतः उनके नाम से इस नदी का नाम काकनय पड़ा। इस प्रकार यह धार्मिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

(२) लाठी की नदी :-

यह नदी गांव बेगटी व माडवाई मारवाड़ से निकल कर लाठी के पास से बहती है जो गांव मूजया से दक्षिण व आईता से उत्तर की ओर बहती हुई २४ कोस पर गाव मोहनगढ़ के पूर्व दिशा में स्थित रन में जा गिरती है। इस नदी का पानी वहां निरर्थक जाता है। अतः इसका उचित उपयोग किया जाय तो अनेकों ग्रामवासियों का भला हो सकता है।

(३) चाँधन की नदी :-

यह नदी जोधपुर राज्य के गांवों से बहती हुई जैसलमेर
में स्थित चांधन नामक गांव के पास से बहती है। अतः इसका
चांधन की नदी है। वर्षा ऋतु में जब यह बड़े वेग से चलती है, उस
अनेकों खेतों को भरती हुई रेत में लोप हो जाती है। इस नदी
पानी को चांधन गांव के पास रोककर खेती के काम में लिया जाव
आसपास की व्यर्थ भूमि का सुन्दर उपयोग हो सकता है और उत्पा
भी बढ़ सकता है।

(४) धउवा व जियाई की नदी :-

यह नदी जैसलमेर के दक्षिण पश्चिम में करीब ७ मील
दूरी पर स्थित जियाई व धउवा नामक गांवों के आस पास छोटी छो
पहड़ियों से निकलती है। इसका समस्त पानी रानीसर तालाब
भरता हुआ जैसलमेर शहर के प्रमुख तालाब गड़ीसर में आता है
गड़ीसर तालाब में गिरने वाली सबसे बड़ी नदी यही है।

(५) गोगड़ी :-

यह नदी गांव छोड़ियाँ से प्रारंभ होकर सांवत, मूलाना,
गांव की सीमा में होती हुई खड़ीन (बांध) रछाव को भर कर लाठी
नदी में जा मिलती है।

इन महत्वपूर्ण नदियों के अतिरिक्त वाकियोबाळो, भू की नदी
चूंधी की नदी, और पोकरन में वहने वाली अनेकों नदियां हैं।

खनिज पदार्थ

खनिज पदार्थों की दृष्टि से जैसलमेर बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। यहां पर पत्थर, चूना, नमक और विविध प्रकार की रंग बिरंगी मिट्टियों के अतिरिक्त न जाने कितने महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ इस धरा के अंक में छिपे हुए हैं— जिनका ज्ञान राजाओं के समय खनिज विशेषज्ञो द्वारा अन्वेषण न होने के कारण न हो सका। देश स्वतंत्र होने के पश्चात हमारी सरकार का ध्यान जैसलमेर मे पिछड़े हुए क्षेत्र की ओर भी गया और यहा पर विविध खनिज विशेषज्ञों द्वारा अन्वेषण कार्य प्रारंभ करवाया। इन विशेषज्ञो द्वारा जब से नवीन खनिज पदार्थों का पता लगा है तथा जिनका ज्ञान पहिले से ही था उनका संक्षिप्त विवरण यहा दिया जा रहा है।

पत्थर :—

यहां पर सबसे अधिक पत्थरो की खाने हैं जिनमे विविध रंगों के इमारती पत्थर निकलते हैं। यह पत्थर जितना मुलायम होता है उतना ही सुदृढ भी। अतः इस पर खुदाई का काम बड़ी सुन्दरता के साथ किया जाता है। इस प्रकार के मुलायम पत्थरों की खानें जैसलमेर के उत्तर तथा पश्चिम में हाबूर नाम के गांव मे अधिक है। इन खानो में पांच प्रकार के पत्थर पाए जाते हैं —

१. काला एवं पीला पत्थर

२. पीला कुरकुरा

३. हाबूर का छींटदार पत्थर

४. बिछिया पत्थर और

५. लाल पत्थर

यहाँ का लाल पत्थर आगरे के ताजमहल व नई-दिल्ली की शाही इमारतों में लगा हुआ है। विदेशों में भी यहां का पत्थर ले जाया गया है।

पत्थरों के अतिरिक्त जैसलमेर के आसपास की पहाड़ियों में गेरू, खड्डी तथा कोयले की भी खाने हैं। फतहगढ तहसील में कोट नामक गांव के पत्थरों की खानों से निकलने वाले पत्थरों में सोना भी पाया जाता है– ऐसा स्थानीय निवासियों का कहना है।

चूना :–

जैसलमेर के उत्तर में नाचणा, देवा, व मोहनगढ़ तथा उत्तर पूर्व में बाप के आसपास उत्कृष्ट कोटि के चूने की अनेकों खानें हैं जिनसे हजारों टन चूना प्रति वर्ष निकाला जाता है। यह चूना कितनी गहराई और कितनी दूरी में फैला हुआ है इसकी जानकारी प्राप्त करके यहाँ से बाहिर ले जाया जाय तो इस क्षेत्र का अच्छा विकास तथा यहाँ के निवासियों को भी काम मिल सकता है।

मुल्तानी मिट्टी :—

रामगढ, कुंभारा कोठा, मंधा आदि गांवों में मुल्तानी मिट्टी की अनेकों बहुत बड़ी खाने हैं, जिनमें उत्तम श्रेणी की मुल्तानी मिट्टी

पेट्रोल :-

पिछले कुछ वर्षों से इस क्षेत्र में खोज करने वाले विशेषज्ञों ने यह निश्चित रूप से घोषित कर दिया है कि जैसलमेर से ५० मील की दूरी पर स्थित रामगढ़ नाम के ग्राम में पेट्रोल मिलने की पूरी संभावना है। अभी अन्य खनिज पदार्थों की खोज भी इस क्षेत्र में जारी है। आशा है निकट भविष्य में भी इसी प्रकार के अन्य महत्वपूर्ण पदार्थों की उपलब्धियां होगी।

मुख्य शहर से ६ कोस उत्तर दिशा में हमीरा के कूवें में तथा लोहारकी व तेजुवों के डूंगर में कोयला प्राप्त होने की भी पूर्ण संभावना है। लोहा व अन्य इसी तरह की धातुएं भी यहीं की पहाड़ियों में प्राप्त हो सकती हैं परन्तु इन सबका अंतिम निर्णय सर्वेक्षण होने के पश्चात ज्ञात हो सकता है। अभी इस सम्बन्ध में हमारी सरकार खोज कर रही है।

गृह उद्योग

जैसलमेर जिले में किसी भी प्रकार का बड़ा उद्योग न होने के कारण यहाँ के निवासी प्रमुखतया गावों में निवास करते हैं और खेती के साथ साथ गाय, बैल, भेड़, बकरी, ऊंट आदि पशुओं का पालन करके, उनसे प्राप्त होने वाले कच्चे माल को बेचकर अपना जीवन-यापन करते हैं। अतः इस क्षेत्र के गावों में घी के व्यापार के अतिरिक्त ऊंट, भेड़, बकरी आदि के बालो की बनी वस्तुओं का निर्माण बहुत अधिक होता है। आज से एक शताब्दी पूर्व इस क्षेत्र में विविध गृह-उद्योग चरम सीमा पर थे और समस्त ग्रामवासी एक क्षण भी व्यर्थ मे व्यतीत न करके अपनी रुचि के अनुकूल अलग अलग कार्यों में व्यस्त रहते थे। परन्तु मील की बनी वस्तुओ का उपयोग प्रतिदिन बढने के कारण सभी गृह-उद्योग शनैः-शनैः घटते जा रहे हैं। फिर भी इस क्षेत्र मे निम्न-लिखित महत्वपूर्ण गृह-उद्योग आज भी देखे जा सकते हैं, जिनका विकास किया जाय तो इस क्षेत्र के निवासियों का पर्याप्त हित हो सकता है।

घी निकालना :–

समस्त उद्योगो में घी निकालना यहाँ का प्रमुख गृह-उद्योग है। यहाँ के निवासी प्राय. गायें रखा करते हैं जिनके दूध से हजारों मन

की निकास कर [illegible] भेजते हैं। [illegible] के लिये बीकानेर [illegible] भारत में [illegible] का निकास है। यहां से [illegible] अमृतसर, बीकानेर, [illegible], [illegible], [illegible] और [illegible] आदि बड़े बड़े शहरों में जाता है।

ऊँट के बालों की दरियां :-

जैसलमेर जिले में ऊंट बहुत अधिक हैं, अतः यहां के अनेकों गांवों में ऊंटों के बालों की दरियां बहुतायत में बनाई जाती हैं। खुइयाला, रामगढ़, मोहनगढ़ आदि गांवों की बनी दरियां बुनाई की दृष्टि से अत्यधिक प्रसिद्ध हैं। इन दरियों में मोर, सारंग, ऊंट, घोड़ा, सिपाही आदि नाना प्रकार के चित्र बने रहते हैं जिनसे इनकी सुन्दरता और भी बढ़ जाती है। इन दरियों को टिकाऊ बनाने के लिये ऊन के साथ में सूत भी मिलाया जाता है। इन दरियों की कीमत १०) रुपये से लेकर ४०) रुपये तक होती है। ऊंट के बालों की बनी हुई होने के कारण यहां के निवासी इन दरियों को "मोटी सतरंजियां' भी बोलते हैं।

इन दरियों का बाजार न होने के कारण इस उद्योग का विकास नहीं हो पा रहा है और इस क्षेत्र की इस उत्कृष्ट कला का दिनों दिन ह्रास होता जा रहा है। इस कला को अगर समुचित रूप से प्रोत्साहन दिया जाय तो ग्रामवासियों को पर्याप्त लाभ हो सकता है

ऊँट के बालों का कपड़ा :-

दरियों के अतिरिक्त खुइयाला, रामगढ, मोहनगढ आदि स्थानों

में ऊँट के छोटे छोटे बच्चो (जिन्हें यहाँ के निवासी टोडिया अथवा पांगळ कहते हैं) के मुलायम बालो के कते हुए सूत के साथ मील का सूत मिलाकर उसमे कपडा भी बनाया जाता है। इस कपडे को यहाँ के निवासी "बाखला" कहते हैं। यह कपडा बहुत गर्म होता है। गावो के निवासी इसके कोट आदि बनवाने और ओढने के काम मे लेते हैं।

बकरी के बालों की बनी वस्तुएँ :-

ऊँटों की तरह ही इस क्षेत्र मे बकरियों की सख्या भी बहुत अधिक है। अत ऊँटो के बालो की तरह ही बकरी के बालों को भी कातकर यहाँ के ग्रामीण बहुत ही कलापूर्ण वस्तुएँ बनाते है जिनमे बेल बूंटेदार ऊँटो के तंग तथा पाला, कूतर, भूसा आदि डालने के लिये बड़े बड़े बोरे, ऊँटो की यात्रा के समय आवश्यक सामान साथ ले जाने के लिये छोटे छोटे बोरे, तथा घास डालने के लिये बोरियाँ, जिन्हे यहाँ के निवासी "छाटियाँ" कहते है, मुख्य हैं।

इन्हीं बालो से ऊँटो की मोहरियाँ, व गायबैल, घास, लकडी आदि को बाधने के लिये बहुत मजबूत रस्सिया बनाई जाती हैं।

ऊनी वस्त्र उद्योग :-

जैसलमेर के चौपायो मे सबसे अधिक सख्या भेडो की हैं। यहाँ पर प्रति व्यक्ति ६ भेड हैं अतः ऊन बहुत अधिक होती है। यहाँ पर ऊन का कारखाना आदि न होने के कारण हजारों मन ऊन बीकानेर तथा ब्यावर होती हुई बम्बई जाती है। यहाँ के ग्रामवासी खेतो में काम करते हैं और घर मे उनकी स्त्रियाँ ऊन कातती रहती है। यहाँ की औरतें ऊन कातने मे बडी चतुर होती हैं। इन स्त्रियों के हाथों कती

बारीक ऊन से बहुत सुन्दर, मुलायम और कलापूर्ण कम्बल, बरड़ी, नेत आदि बनाए जाते हैं। दूर दूर के निवासी जब भी जैसलमेर आते हैं इन वस्तुओं को बड़े चाव से खरीदते हैं।

आज हमारी सरकार अगर इस क्षेत्र में आवागमन के समुचित साधनों, बुनकरों को सहायता तथा बनी हुई वस्तुओं के लिये बाजार तैयार कर बेचने का प्रबन्ध करने की व्यवस्था कर दें तो यहां का पर्याप्त माल इतर क्षेत्रों में खप सकता है और हजारों ग्राम वासियों का जीवन-स्तर ऊँचा उठाया जा सकता है।

स्वल्प सहायता से पनपने वाले महत्वपूर्ण उद्योग

पशु पालन :-

जैसलमेर घना बसा हुआ न होने के कारण इसके चारों ओर विशालकाय चरागाह है। अतः पशुपालन की दृष्टि से यह क्षेत्र बहुत ही उपयोगी है। यहाँ पर उत्पन्न होने वाली 'सेवण' घास पशुओं के लिये बहुत ही हितकर है। आज भी इस क्षेत्र का शुद्ध घी भारत विख्यात है। परन्तु वनस्पति घी का प्रचार प्रतिदिन बढने के कारण यह गृह-उद्योग भी घटता जा रहा है।

यहां के लाठी, खाभा, देवा, मोहनगढ, बासणपीर, मोहार आदि आदि गाँवों के आसपास जहाँ अच्छे चरागाह है। डेरी फर्म बनाए जाय तो इस क्षेत्र की काफी उन्नति हो सकती है और शुद्ध घी भी खाने को प्राप्त हो सकता है।

कागज उद्योग :-

इस क्षेत्र में "सिणिया" नाम की एक विशेष प्रकार की घास अधिकता से उत्पन्न होती है। इस घास को पशु अधिकता से नही खाते। अतः यह व्यर्थ नष्ट हो जाती है। यह घास कागज बनाने के काम आ सकती है। अतः इस क्षेत्र में कागज निर्माण कार्य पनपने की भी पूरी

संभावना है।

रस्सी उद्योग :-

यहाँ के कई एक भागों में 'आक'' नाम के वृक्ष बहुत हैं। जब यह हरा रहता है इसकी लकड़ी के छिलके के नीचे जुट की तरह का रेशा रहता है। छिलकों को उतार कर उसे साफ करके रेशा निकाला जाता है, जिसे यहाँ के लोग ''अकाळा'' कहते हैं और उसे कातकर बहुत बड़ी बड़ी रस्सियां बनाते हैं। इस वृक्ष के रेसे से बनी रस्सी बड़ी मजबूत और मुलायम होती है। अतः इस उद्योग का विकास होने की भी पूरी संभावना है।

गूगल उद्योग :-

जैसलमेर के आस पास ४० मील के क्षेत्र में चारों ओर छोटी छोटी पहाड़ियाँ हैं। इन पहाड़ियों की ढलाई में बहुत बड़ी संख्या में गूगल के वृक्ष उत्पन्न होते है। यह वृक्ष ५-६ फीट ऊँचा तथा छोटी पत्तियों का होता है। इसके तनों में से रबर के वृक्षों की तरह चीरा लगाने पर गाढा रस निकलता है और यही रस जमकर गूगल बनता है। इस गूगल को यहाँ के भील अथवा भीलनियाँ झोलियों में एकत्रित करके शहर में बेच आते हैं। इन लोगों को गूगल निकालने का वैज्ञानिक तरीका ज्ञात न होने के कारण बहुत थोड़ी मात्रा में गूगल प्राप्त होता है। अगर इस उद्योग को बढाया जाय तो यहाँ के निर्धन ग्रामवासियों का बहुत हित हो सकता है।

गूगल आयुर्वेद की दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण वस्तु है। इससे अनेकों औषधियों का निर्माण होता हैं। इसका उपयोग भवननिर्माण के

समय सिमेंट के साथ भी किया जाता है। इसके धुंवें मे मच्छरों को मारने की अद्भुत शक्ति होने के कारण इसका उपयोग धूप मे भी किया जाता है।

नमक उद्योग :-

जैसलमेर से २२ मील उत्तर की ओर "कणोद" नामक गांव में खारे पानी की विशाल झील है जिसमे प्रति वर्ष हजारों मन नमक होता है। अभी इस झील मे से नमक कम निकाले जाने पर भी जैसलमेर जिले के लिये पर्याप्त होता है। सांभर की तरह इस झील मे छोटी क्यारियाँ बनाकर उसमें पानी भर दिया जाता है जो सर्दियों मे २० दिन और गर्मियों मे १५ दिन मे जमकर नमक बन जाता है। इसी प्रकार पोकरन के पास भी पहले नमक उद्योग काफी विकसित था, परन्तु आज वह मृतप्राय है। इस नमक-उद्योग का भी विकास किया जा सकता है।

ऊन उद्योग :-

जैसलमेर जिले मे प्रतिवर्ष ७० हजार मन के आसपास ऊन होती है, परन्तु यहाँ ऊन की गांठे बांधने व साफ करने का कारखाना न होने के कारण यह ऊन बीकानेर अथवा ब्यावर चली जाती है। अगर जैसलमेर अथवा पोकरन में ऊन साफ करने व गांठ बनाने का कारखाना खोला जाय तो इस क्षेत्र की काफी उन्नति हो सकती है।

बागवानी :-

जैसलमेर शहर के आसपास अमरसागर, मूलसागर तथा बड़ा

बाग नाम के तीन बड़े उद्यान हैं। इन बगीचों की भूमि इतनी उर्वरा है कि आम, अमरूद, जामुन, नींबू, मौसमी, अंगूर, खिरणी, गूंदा, टमाटर, गोभी, आलू, मेथी, बेंगन, भिण्डी, करेला, काकड़ी, धनिया, मिर्च और फूलों में गुलाब, चमेली, मोगरा जूही आदि उत्पन्न होते हैं। यह कह दिया जाय कि भारत में उत्पन्न होने वाले प्रायः समस्त फल-फूल व साक भाजियाँ यहाँ उत्पन्न होती हैं तो किसी भी प्रकार की अत्युक्ति न होगी। परन्तु यहाँ के माली अकर्मण्य होने तथा पानी गहरा होने के कारण इन बगीचों में फल, फूलों तथा सब्जियों का उत्पादन इतना कम होता है कि मुख्य शहर जैसलमेर के लिये भी पर्याप्त नहीं होता। इन बगीचों के अतिरिक्त अन्य उर्वरा भूमि भी व्यर्थ पड़ी है। अतः इस उपजाऊ भूमि में कूवों से पानी निकालने की मशीनों का उचित प्रबन्ध करके बागवानी प्रारंभ की जाय तो उत्पादन बहुत बढ़ सकता है।

रेल तथा सड़कें

संपूर्ण राजस्थान मे आवागमन के साधनों एवं सड़कों की कमी जैसलमेर जिले में है। इसी कमी के कारण इस प्रदेश का समुचित विकास संभव न हो सका। इसके आसपास दक्षिण मे बाड़मेर तथा पूर्व में पोकरन नाम के दो रेल्वे स्टेशन हैं। पहला स्टेशन बाड़मेर जैसलमेर से १०४ मील तथा दूसरा स्टेशन पोकरन यहाँ से ७० मील दूर है। १ जून '५४ से पोकरन जैसलमेर का सब डिविजन हो जाने से जैसलमेर जिले में रेल अवश्य आ गई है। जहाँ तक सड़कों का प्रश्न है जैसलमेर जिले मे निम्नलिखित उल्लेखनीय सड़कें हैं जिनसे संपूर्ण जैसलमेर का व्यापार एवं यात्रियों का आना जाना होता हैं। अन्य भागों में जहा सड़क नही है स्थानीय लोग मरु पोत ऊँट से ही आया जाया करते हैं।

१. जैसलमेर पोकरन सड़क २. जैसलमेर बाड़मेर सड़क

३. जैसलमेर रामगढ सड़क ४. जैसलमेर मोहनगढ सड़क

जैसलमेर पोकरन सड़क :-

इस जिले की सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं निकटतम रेल्वे स्टेशन "पोकरन" से मिलाने वाली "जैसलमेर पोकरन सड़क" ७० मील लंबी है। यह मुख्य सड़क पिछले वर्षों मे पक्की बन गई है। यहाँ का समस्त व्यापार इसी रास्ते से होता है। जैसलमेर आने वाले यात्रियों

के लिये यही सड़क सुविधा जनक है। यहाँ से प्रति दिन ३ बसें आती जाती हैं। जैसलमेर से ४ बजे शाम को रवाना होनेवाली बस पोकरन स्टेशन से रवाना होने वाली ट्रेन (गाड़ी) से मिलाती है तथा प्रातः काल पोकरन आने वाली गाड़ी (ट्रेन) के मुसाफिरों को लेकर यहाँ से ७ बजे रवाना होती है जो ११-३० पर जैसलमेर पहुँचाती है। जैसलमेर से रवाना होते समय बासनपीर, चांधन, लाठी, चाचा नाम के प्रमुख गांव आते हैं। पोकरन से आगे जोधपुर, फलोदी, बाप एवं बीकानेर जाने के लिये बसें यहीं से मिल जाती है। आवागमन की दृष्टि से पोकरन अच्छा केंद्र है यहाँ से कई देहातों को भी बसे जाती हैं।

जैसलमेर बाड़मेर सड़क :-

दूसरी सड़क जैसलमेर से बाड़मेर तक की है। यह कच्ची सड़क १०४ मील लंबी है। जब पाकिस्तान नहीं था और पोकरन रेलवे स्टेशन नहीं बनी थी उस समय जैसलमेर को आने वाला सारा सामान एवं यात्री इसी रास्ते से आया-जाया करते थे। आज यह सड़क इतनी महत्वपूर्ण नहीं रही।

जैसलमेर से बाड़मेर के लिये प्रतिदिन एक बस जाती है। इसके बीच में देवीकोट, फतहगढ़, गुंगा तथा शिव नाम के महत्वपूर्ण गांव आते हैं।

जैसलमेर रामगढ़ सड़क :-

व्यापार की दृष्टि से यह तीसरी सड़क अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यह लगभग [illegible] मील लंबी है। सारे जैसलमेर के पश्चिमी

भाग की ऊन तथा घी इसी रास्ते से होकर आता है। इसके बीच में बरमसर, मोकल, सोनू, रामगढ, खुइयाला आदि दर्शनीय गाव आते हैं। जैसलमेर से प्रतिदिन रामगढ बस जाती है।

यह सड़क कच्ची होते हुए भी वर्षा ऋतु के अतिरिक्त अन्य ऋतुओं में बडी अच्छी है, परन्तु वर्षा मे यह अधिक खराब रहती है।

जैसलमेर मोहनगढ सड़क :–

मोहनगढ विशेष दूर न होकर केवल ३५ मील की दूरी पर स्थित है। अतः इस भाग के निवासी प्राय अपने ऊँटो पर ही आते जाते हैं। इस कारण सप्ताह में केवल गुरुवार के दिन शाम को ४ बजे जैसलमेर से बस जाती है, वह दूसरे दिन शुक्रवार को शाम को ४ बजे मोहनगढ मे रवाना होकर १० बजे जैसलमेर आती है। रास्ते में इडा, कालाडूंगर तथा कणोद आदि गाव आते हैं जो दर्शनीय है। वर्षा ऋतु मे इन गावो की सुन्दरता बहुत ही बढ जाती है।

वैसे तो अन्य गावों को और भी मोटरें जाती हैं परन्तु मोटर चालको ने ही अपनी सुविधानुसार रास्ते निकाले हैं अतः वे सडको की संख्या मे नही आ सकते।

जैसलमेर सम सड़क :–

जैसलमेर को पश्चिमी क्षेत्र मे मिलाने वाली जैसलमेर सम सड़क अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यह सडक भी अन्य सडको की तरह कच्ची ही है। जैसलमेर से सम को प्रतिदिन बस जाती है। इसके रास्ते मे कई अच्छे दर्शनीय स्थान आते है।

उक्त महत्वपूर्ण सड़कों के अलावा जैसलमेर के आस-पास के दर्शनीय उद्यान अमरसागर, मूलसागर एवं बड़ाबाग को भी सड़कें जाती हैं। इन सड़कों के अलावा अन्य सभी स्थानों को पहुंचने के लिये मोटर ड्राइवर कच्चे रास्ते निकालकर चले जाते हैं। परन्तु इस सुविस्तीर्ण भू भाग में सड़कों का अभाव खटकता है। इस अभाव को दूर करने के लिये हमारी सरकार अवश्य ध्यान देगी।

रेल :-

इस जिले का रेल्वे स्टेशन पोकरन इस दिशा में आने वाले यात्रियों को जोधपुर पहुँचाता है। यहां से दिन में दो बार एक प्रातः काल और दूसरी रात्रि को रेल फलोदी होती हुई जोधपुर जाती है तथा सुबह और सायंकाल दो बार आती है। जैसलमेर जिले में बाहिर से आने वाला समस्त सामान इसी रेल लाइन से आता है। अतः इस जिले का यह प्रमुख रेल्वे स्टेशन है। पोकरन के बाद दूसरा रेल्वे स्टेशन रामदेवरा है।

जन-संख्या

क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान के नगरों में जैसलमेर का तृतीय स्थान है। परन्तु जन-संख्या में सबसे पिछड़ा हुआ है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि उक्त नगर सदैव से ऐसा ही था। जिन दिनों भारत में आवागमन और व्यापार ऊँट तथा बैलों पर होता था, उन दिनों जैसलमेर विकास की चरमसीमा पर था। इसके विपरीत आज यह बहुत ही पिछड़ा हुआ है— ऐसा क्यों हुआ ? इसका कारण बताते हुए श्रीजगदीशसिंहजी गहलोत ने राजपूताने के इतिहास में लिखा है :—

"कर्मचारियों की लापरवाही और अव्यवस्था के कारण खेती व व्योपार का कोई सुभीता न होने और फसल केवल सावणू होने से यहाँ के लोग अक्सर देश छोड़कर आसपास के इलाकों में निकल जाते हैं और वहाँ बसने पर बहुत कम लोग वापिस लौटते हैं। इससे जन-संख्या दिनों-दिन घट कर राज्य उजड़ता जाता है। यहाँ की प्रायः लाखों की संख्या में जनता ब्रज, अलीगढ़, बुन्देलखण्ड, मध्यप्रान्त, बराड़ और सिंध में जाकर बस गई हैं। पुष्करणे ब्राह्मण तो सपरिवार काबुल, कन्धार तक पहुंच गये है।

इसके अतिरिक्त राजाशाही के जमाने में राज्य के उच्च-

कर्मचारियों के अत्याचारों से यहां के निवासियों को अपना देश छोड़ना पड़ा इसका ज्वलंत उदाहरण पालीपाल ब्राह्मणों का देश छोड़ना है। समय समय पर अकाल पड़ने एंव अन्य बड़ा उद्योग-धंधा न होने के कारण भी यहाँ की बहुत बड़ी जनसंख्या अन्य देशों में जा बसी। प्रायः भारत के समस्त प्रमुख नगरों में जैसलमेर के निवासी मिलते हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि प्रवासी जैसलमेरियों की संख्या आज ७-८ लाख से भी अधिक होगी।

पिछले ६० वर्षों की जनसंख्या नीचे दी जा रही है जिससे आप सहज ही अनुमान लगा सकते है कि इस प्राचीन नगर में कितने उतार चढाव आए।

जनगणना का वर्ष		जनसंख्या
सन्— १८८१	—	१,०८१४३
१८९१	—	१,१५७०१
१९०१	—	७३,३७०
१९११	—	८८,३११
१९२१	—	६७,६५२
१९३१	—	७६,२५५
१९४१	—	८३,२४६
१९५१	—	१,०२७४३
१९६१	—	१,४०३३८

सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार इस जिले में ६२४ पुरुष तथा ७७८७१ स्त्रियाँ है जिसमें १२६६९२ की आबादी गांवों

तथा १३६४६ की आबादी शहर में निवास करती है । यहाँ पर ७४·७ प्रतिशत हिन्दू, २४·६ प्रतिशत मुसलमान, ०·७ प्रतिशत जैनी तथा ०·४ प्रतिशत सिक्खों की बस्ती है । प्रति वर्गमील ७ व्यक्ति निवास करते हैं ।

आज हमारी सरकार का इस ओर उचित ध्यान है और इस पिछड़े क्षेत्र का विकास करने के लिये अनेकों योजनाएँ बनाई जा रही हैं । आशा है १०–१५ वर्षों पश्चात यह भाग भी लहलहा उठेगा ।

शिक्षा :–

शिक्षा की दृष्टि से यह जिला अतीव पिछड़ा हुआ है । स्वतंत्रता के पूर्व यहाँ स्कूलें कम थी । परन्तु आजादी के पश्चात इस क्षेत्र का शिक्षा की दृष्टि से पर्याप्त विकास हुआ । वर्तमान में इस जिले में हायर सेकंडरी स्कूल २, मिडिल स्कूल १३, जुनियर बेसिक स्कूल १५, प्राई-मरी स्कूल १२१ तथा स्पेशल स्कूल २७१ है । १९६१ की जन-गणना के अनुसार इस जिले के शिक्षित निवासियों का औसत ८·११ है ।

सुव्यवस्थित सड़को एवं आवागमन के साधनों का अभाव होने के कारण यहां के निवासी शिक्षित नहीं हो पाते । यहाँ के गांव भी दूर दूर हैं और प्रत्येक की आबादी भी अधिक नहीं है । अतः दो तीन गांव मिलकर भी एक स्कूल का लाभ उठाने में असमर्थ है । आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं होने से भी यहाँ के ग्रामवासियों को बाल्यकाल में ही भेड़, बकरी चराने या खेती करने का काम करना पड़ता है ।

इन सब कारणों से यहाँ की जन संख्या शिक्षा की दृष्टि से बहुत ही पिछड़ी हुई है ।

कृपि :—

जैसलमेर जिला पशु और कृपि पर जीवनयापन करने वाला जिला है। यहाँ की ८० प्रतिशत आवादी खेती करती हैं। इस क्षेत्र में नहर न होने के कारण केवल वर्षालू फसल होती है। परन्तु थोड़ी वर्षा होने पर भी यहाँ की जमीन में बाजरा, गवार, तिल, मूंग, मोठ आदि धान वहुतायत से उत्पन्न होता है। जब कभी वर्षा अधिक होती है इस क्षेत्र में हजारों टन गेहूं और जवार, उत्पन्न होता है।

वैसे तो जैसलमेर जिले में अनेकों छोटे २ बांध है, जिनमें प्रति वर्ष हजारों मन गेहूँ उत्पन्न होता है, परन्तु १६ बांध इस प्रकार के हैं जिनकी प्रत्येक की जमीन १५० हल— (२ १/१५ ऐकड़- १ हल) से अधिक है। इस प्रकार के वांध भूतपूर्व जैसलमेर राज्य में १६ थे। परन्तु १ जून १९५४ से वाप का कुछ भाग फलोदी तहसील में चले जाने के कारण मनचितिया, टीपू, व झारासर नाम के तीन बांध फलोदी तहसील में चले गये। इन वांधों का उत्पादन बढ़ाने हेतु अगर सुन्दर हलों व अच्छे बीज का उपयोग किया जाय तथा किसानों को बीज बोना, खाद देना, आदि कृषि विपयक ज्ञान से परिचित कराया जाय तो इस दिशा में पर्याप्त उन्नति हो सकती है। यहां की जमीन बड़ी उर्वरा है। आवश्यकता इस क्षेत्र में विकास करने की है। आशा है हमारी सरकार इस की ओर उचित ध्यान देगी।

उल्लेखनीय १६ वांध जिला तहसील के अन्तर्गत है उनके नाम नीचे दिये जा रहे हैं।

क्रम संख्या	गांव का नाम	तहसील का नाम
१	लठीया	जैसलमेर
२.	सोनल	"
३.	लोद्रेला	"
४.	भाटियासर	"
५.	दइया	"
६.	जैतसर	"
७.	मयूरड़ी	"
८.	रछाव	"
९.	श्री रनमोहनगढ़	"
१०	कुछिया	सम
११.	बुज्ज	"
१२.	मोहार	"
१३.	सरन	रामगढ़
१४.	सुइयाला	"
१५.	कुछड़ी	"
१६.	सेहरा	"

जनजीवन

जैसलमेर की जनता का जनजीवन राजस्थानी जनता से अलग नहीं हैं। यहां की जनता अधिकतर निर्धन और अशिक्षित है। यहाँ के निवासियों का रहनसहन बड़ा सादा एवं व्यवहार निष्कपट हैं। गरीबी होने के कारण यहाँ के लोग मोटा खाना खाते हैं तथा मोटा कपड़ा पहनते हैं। साधारणतया यहाँ के निवासियों का मुख्य भोजन बाजरा गेहूं, भुरट, मूंग और दूधदही है। साग सब्जियाँ अधिक उत्पन्न न होने के कारण गांवों के निवासी कैर, गवार की फली, सांगरी तथा लाचरा आदि का साग बनाकर अपना भोजन करते है।

यहाँ के रीति-रिवाजों में भी परंपरा के अनुसार बड़ी सादगी है। विवाह आदि सामाजिक कार्यों में विशेष आडंबरों पर अधिक व्यय नहीं किया जाता। ब्राह्मण और वैश्य समाज प्रति तीसरे वर्ष विवाह के मुहूर्त निकलवाते हैं और सम्मिलित रूप से उसी एक शुभ मुहूर्त में विवाह करते हैं। अधिकांश घरों में विवाह होने के कारण खर्चा अधिक न होकर कम लगता है।

यहाँ के लोगों की वेश-भूषा अलग अलग प्रकार की है। यथा पश्चिमी क्षेत्र की ओर निवास करने वाले व्यक्तियों की वेश-भूषा सिंध पास में होने के कारण सिन्धवालों से मिलती जुलती हैं। आप इत्यादि

भागों मे जिस ओर बीकानेर पास लगता है, वहाँ के निवासियों की वेषभूषा बीकानेर से मिलतीजुलती है। मुख्य शहर और आसपास के ग्रामवासियों की वेषभूषा यद्यपि राजस्थान के अन्य क्षेत्रों से मिलती जुलती ही है परन्तु उनके साफे का बन्धेज अलग प्रकार का है। यहा के ब्राह्मण, वैश्य और राजपूत लोग नाना प्रकार के स्वर्णिम आभूषण पहनते हैं। औरतों को आभूषणों का विशेष चाव है। गरीब जाति के स्त्री-पुरुष चांदी के गहने पहनते हैं। इन गहनों की बनावट सिंध प्रान्त से मिलती जुलती है। परन्तु शहर के निवासी आज के समय मे प्रचलित स्वर्णिम गहनों का तथा दैनिक जीवन मे चांदी के बर्तनों का उपयोग करते हैं।

इस जिले की भाषा यद्यपि राजस्थानी ही है परन्तु अन्यान्य क्षेत्रों की छाप भी पड़ी हुई है। उदाहरण स्वरूप इस जिले का पश्चिमी भाग जो पाकिस्तान के सिंध प्रान्त से लगता है— वहाँ की भाषा सिंधी मिश्रित राजस्थानी है। शेष भाग की भाषा बीकानेरी एवं जोध-पुरी बोली से मिलती जुलती है। यहाँ के ग्रामीणजन जिस भाषा का प्रयोग करते हैं वह अपभ्रंश भाषा के निकट पड़ती है। अनेकों अपभ्रंश भाषा के शब्द इस प्रकार के हैं जो यहा के जनमानस द्वारा आज भी बोल चाल की भाषा के प्रयुक्त होते हैं।

यहाँ के स्त्रीपुरुषों को गीत गाने और लोक कथाएँ कहने का बड़ा चाव है। अनेकों प्राचीनतम लोक गीत और लोककथाएँ इस क्षेत्र के निवासियों के कंठो में आज भी सुरक्षित हैं। नृत्य कला का भी प्रदर्शन यहा घूमर नृत्य के रूप में प्रायः सर्वत्र देखा जाता है। चैत्र के वासन्तिक

पर्व गणगौर और सावन भादों की तीजों के अवसर पर प्रत्येक गांव नाच और गान से गूंजता सा प्रतीत होता है।

यहां का ग्राम्य जीवन बड़ा सुन्दर और स्वाभाविक है। यहां के अधिकतर ग्रामवासी झोंपड़ों में रहते हैं। कतिपय समृद्ध व्यक्तियों के पक्के मकान भी गांवों में देखने को मिलते हैं। यहां के ग्रामवासी एवं शहरवासी जब तक तालाबों में पानी रहता है तालाबों का पानी पीते हैं। तालाबों का पानी समाप्त होने पर कूवों का पानी पीते हैं। ये कूवे प्रत्येक गांव की प्राकृतिक स्थिति के अनुसार कम अथवा अधिक गहरे हैं। कहीं-कहीं कूवों का पानी खारा और कहीं-कहीं मीठा भी निकलता है।

अकाल में इन कूवों की ही सहायता से यहां का ग्रामीण अपना तथा पशुओं का जीवन बचा पाता है।

इस जिले का मुख्य व्यवसाय पशुपालन होने के कारण यहां के निवासियों का गाय-बैल आदि पशुओं पर पुत्रवत् स्नेह रहता है। इसीलिए इस भाग में कहीं पर भी गो हत्या नहीं होती। यहां तक कि कुछ एक लोग अपने पशुओं को बेचना संतान को बेचने के तुल्य समझते हैं। यहाँ के निवासी अशिक्षित होने के कारण परम्परा से चले आते हुए अन्ध विश्वासों को विशेष रूप से मानते हैं। अगर शकुन अच्छे नहीं होते तो वे लोग घर से बाहर कहीं भी अन्य दिशा में नहीं जाते।

विवाह शादी के अवसरों पर यहाँ के गांवों में अफीम का प्रयोग बहुलता से होता है। छोटे बड़े सभी ग्रामवासी 'र्‌याण' में बैठकर अफीम लेना-देना परस्पर प्रेम का प्रतीक समझते हैं। अगर गांव का कोई विशेष व्यक्ति किसी आगन्तुक को अफीम की मनुहार करता है

और वह इन्कार कर देता है तो परस्पर नाराजगी हो जाती है। लड़ाई झगड़ों का निपटारा भी अफीम की मनुहारों से किया जाता है। जिसे यहाँ के निवासी "अमल गळना" कहते है। 'अमल गळने' के पश्चात फिर लड़ाई नहीं होती।

यहाँ के ८० प्रतिशत निवासियों का मुख्य व्यवसाय पशुपालन व खेती है। प्रायः गांवों मे निवास करने वाले लोग गाय, बैल, भेड़, बकरी, भैंस, घोड़ा, ऊँट आदि चौपाए पशु रखते हैं। ये लोग भेड़ो से ऊन तथा गायों से घी एकत्रित करके शहर वाले व्यापारियो को बेचकर अपना जीवन निर्वाह करते हैं। इसके अतिरिक्त ऊँटो, बैलो तथा भेड़ों की संख्या बढ़ने पर ये ग्रामवासी इन्हें बेचते भी हैं। जब वर्षा अच्छी होती है तब ये लोग बैलो, ऊँटो तथा भैंसों से बाजरा, गेहूं, ज्वार, ग्वार, मूंग, तिल की खेती करते हैं। गावों के कतिपय निवासी लकड़ी एवं घास के लादे तथा गोंद और गूगल आदि भी बेचकर अपना जीवनयापन करते हैं। यहाँ के जंगलो मे गोंद एवं गूगल अधिकता से उत्पन्न होता है। गूगल के जितने वृक्ष जैसलमेर में है उतने शायद ही अन्य क्षेत्रो मे हो। परन्तु उचित देखभाल न होने एवं वृक्षो से गूगल निकालने के तरीके मे परिचित न होने के कारण यहाँ के निवासी इसे प्रचुर मात्रा मे प्राप्त नही कर सकते। पहिले यहाँ से काफी गूगल कराची, बम्बई, सिंध आदि क्षेत्रो में जाया करता था।

जिन गांवो में भेड़, बकरी व ऊँट अधिक संख्या मे है वहाँ के लोग भेड़ की ऊन को कातकर बड़े सुन्दर कंबल व खेस तथा पट्टू बनाते है। इस प्रकार के वस्त्रों के बुनकर पश्चिमी एवं उत्तरी भाग में

अधिक हैं। कतिपय लोग बकरी तथा ऊंट के बालों से अनेक प्रकार की बोरियां, बोरे तथा दरियां बनाते हैं। यह कारोबार रामगढ़, मोहनगढ़, साहगढ़ आदि गांवों में बहुत होता है।

यहाँ के व्यापारी गांवों से ऊन और घी खरीदकर विभिन्न भागों में भेजते हैं। जैसलमेर की ऊन व घी भारत में बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ से प्रति वर्ष ४० हजार मन घी तथा ७० हजार मन ऊन भारत के प्रमुख व्यवसायी क्षेत्रों में भेजी जाती है। बाहर से आने वाली वस्तुओं में कपड़ा, चीनी, अफीम, गुड़, चावल तथा अन्य सामान प्रमुख है।

चमार लोग चमड़ा रंगकर कच्चा भी बेचते हैं तथा उसकी बनी जूतियाँ बेचकर अपना जीवनयापन करते हैं। आजकल यहाँ से हजारों मन पशुओं की हड्डियाँ भी बाहर जाती है। ये लोग इस धंधे के साथ खेती भी करते हैं।

यहाँ के ग्रामवासियों में शिक्षा का अभाव होने एवं परंपरा से कर्जदार होने के कारण ये लोग अपनी ऊन तथा घी उन्हीं व्यापारियों को बेचते हैं जिनसे कर्ज लिया हुआ होता है। ये व्यापारी इन ग्राम-वासियों से बहुत सस्ते दामों पर कच्चा माल खरीद लेते हैं। इस प्रकार उन्हें अपनी वस्तुओं पर पूरा मूल्य नहीं मिल पाता। अतः ये ग्रामवासी निर्धन ही बने रहते हैं और इनके जीवन में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं हो पाता। परन्तु जबसे इस क्षेत्र में सहकारी संस्थाओं की स्थापनाएँ हुई हैं— तब से लोगों को विश्वास होने लगा है कि हमारा जीवन निकट भविष्य में अच्छी प्रगति कर पायेगा।

जैन-तीर्थ-स्थान जैसलमेर

भारत के सुदूर पश्चिमी कोने में अवस्थित जैसलमेर जैनियों का एक महत्वपूर्ण तीर्थस्थान है। इसके उत्तर में पाकिस्तान का भावलपुर व खैरपुर है, पूर्व में बीकानेर व जोधपुर, दक्षिण में जोधपुर बाड़मेर व पाकिस्तान का कुछ भाग और पश्चिम में पाकिस्तान का सक्खर व खैरपुर है। यह नगर इस दिशा के अन्तिम रेलवे स्टेशन पोकरन से ७० मील की पक्की सड़क से मिला हुआ है। पोकरन से प्रतिदिन तीन बसें सुबह दोपहर और सायंकाल को जैसलमेर जाती हैं। जैसलमेर पहुँचने के लिये राजस्थान के प्रमुख नगर जोधपुर से पोकरन और बीकानेर से बाप तथा बाप से पोकरन तक सीधी बसें भी चलती हैं। दूसरा रास्ता जोधपुर से बाड़मेर से होकर जैसलमेर आने का भी है। परन्तु वह रास्ता बहुत ही लम्बा पड़ने के कारण प्रायः सभी यात्री इसी मार्ग से जैसलमेर पहुचते है। जैसलमेर में यात्रियों के ठहरने के लिये जैन धर्मशाला है। यह धर्मशाला पटुवों की हवेलियों के पास बनी हुई है। वैसे तो इस धर्मशाला में जैन यात्री ही ठहरा करते हैं, परन्तु अन्य कोई धर्मशाला न होने से प्रायः सभी को कुछ दिन ठहरने की अनुमति व्यवस्थापक से मिल ही जाती है।

धर्मशाला के अतिरिक्त आधुनिक सुविधाओं से युक्त सरकारी रेस्ट हाउस भी अमरसागर की पिरोल के बाहर बना हुआ है जिसमें किराया देकर ठहरा जा सकता है। मुख्य नगर के प्रमुख बाजार में पोस्ट ओफिस बनी हुई है। यहां से हिन्दी अंग्रेजी में तार देने एवं टेलीफोन करने की भी व्यवस्था है। मुख्य नगर में एक बिजली घर है जो सारे नगर को बिजली देता है। नगर की प्रमुख गलियों में पानी के नल भी लगे हुए हैं।

राजस्थान के एकीकरण के पूर्व यह एक प्रथम श्रेणी का राज्य था परन्तु आज एक विशालकाय जिला है। इस प्राचीन नगर को श्रीकृष्णकुल में उत्पन्न यदुवंशी भाटी महारावल श्री दूसाजी के सुपुत्र श्री जैसलजी ने वि० सं० १२१२ श्रावण सुदी १२ रविवार को बसाया। इससे पूर्व यहाँ की राजधानी जैसलमेर नगर से १० मील पश्चिम की ओर स्थित लोद्रवा थी। पुरातन शिलालेखों में इस देश का नाम "वल्लमंडल" (वल्लदेश) और "माड़" भी मिलता है। जैसलमेर के साथ जैनों का सम्बन्ध इस राज्य की पुरानी राजधानी लोद्रवा से चला आ रहा है। यही सम्बन्ध जैसलमेर राजधानी बनने पर भी पूर्ववत् अक्षुण्ण रहा और हजारों जैनी जैसलमेर में आकर बस गए। इतिहास का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि महारावल श्री अखैसिंहजी के समय में भी जैनों के ४ गोत्रों के ६०० मकान थे। इनमें जंदाणी, पारख, वर्धमान, व बाफणा इस जाति के मुखिये थे जिनके नाम से आज भी यहाँ कई एक मोहल्ले सुविख्यात हैं।

विस्तार की दृष्टि से राजस्थान में जैसलमेर राज्य का जोधपुर

जैसलमेर जैन मंदिर का कलापूर्ण मंडप
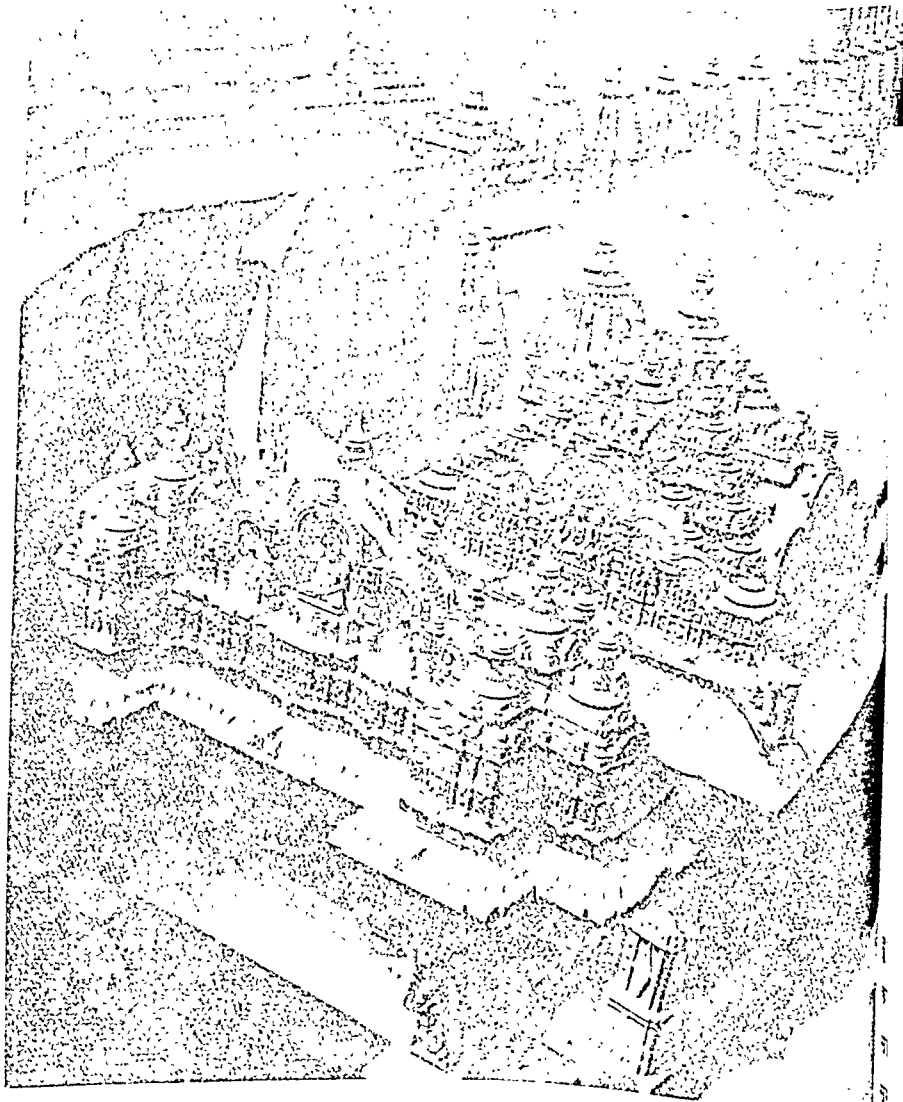
जैन मंदिरों के शिखर (अभय जैन ग्रंथालय से साभार)

और बीकानेर के पश्चात तृतीय स्थान था। आबादी की दृष्टि से भी जितना पिछड़ा हुआ आज दिखाई दे रहा है, वैसा ही सदैव से नहीं था। कुछ शताब्दियों पूर्व यह नगर व्यापार की मंडी थी। अनेकों वैभवशाली लोग इस नगर से होकर व्यापार करते थे।

आज से पूर्व इस नगर में सुविज्ञ जैनाचार्यों के अनेक उपाश्रय थे और अनेकों जैनमुनि इस पुण्य भूमि में दूर दूर से चतुर्मास व्यतीत करने को आया करते थे जिनका उल्लेख नाना शिलालेखों में देखने को मिलता है। उन आचार्यों की पुनीत आज्ञा से कई एक वैभवसम्पन्न जैनों ने अनेकों कलापूर्ण मन्दिर बनवाए जो आज शिल्प, स्थापत्य और प्रस्तर पर बारीक खुदाई के लिये विश्व विख्यात है। इन मन्दिरों की गणना जैनाचार्यों ने अपने तीर्थों में करके इन्हें और भी महत्वपूर्ण बना दिया है। कविवर समयसुन्दरजी ने अपनी तीर्थमाला में विभिन्न तीर्थ स्थानों के साथ साथ जैसलमेर की महत्ता को प्रकट करते हुए लिखा है—

"जैसलमेर जुहारिये, दुःख वारिये रे
अरिहन्त बिम्ब अनेक, तीरथ ते नमूं रे।।"

आज भी प्रति वर्ष हजारों जैन यात्री अनेक तीर्थों का दर्शन करते हुए इस प्राचीन नगर में आते हैं। परन्तु यहाँ के जैन मंदिरों के दर्शन करने एवं विशिष्ठ कलापूर्ण स्थानों को देखने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इसी असुविधा को दूर करने के लिये यहाँ के समस्त जैनमंदिरों के साथ साथ अन्य कतिपय दर्शनीय स्थानों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

जैसलमेर के कई एक महत्वपूर्ण जैन-मंदिर दुर्ग में बने हुए हैं अतः यात्रियों की सुविधा के लिये दुर्ग-स्थित जैन-मंदिरों से ही परिचय दिया जा रहा है। नीचे (तलोटी में) बनी धर्मशाला से किले में पहुंचने के लिये एक घुमावदार चढ़ाई वाली पत्थरों की बनी सड़क है जो चार बड़े दरवाजों को पार करके दुर्ग के मध्यस्थित चौक तक पहुंचती है। उक्त चारों दरवाजों के नाम क्रमशः अखैपरोल, (नीचली परोल) सूरजपरोल, गणेशपरोल (भूतापरोल) और हवा परोल हैं। हवापरोल से निकलते ही एक बड़ा चौक आता है और उससे सीधा रास्ता जैनमंदिरों की ओर जाता है ।

श्री पार्श्वनाथजी का मन्दिर :-

दुर्ग के भीतर ५२ विशाल जिनालय सहित मूलनायक श्रीचिन्तामणि पार्श्वनाथजी का मन्दिर है। इस मंदिर की नींव खरतरगच्छाधीश जिनराजसूरिजी के उपदेश से श्री सागरचन्द्रसूरिजी ने संवत् १४५९ में डाली थी और संवत् १४७३ में जिनवर्धनसूरिजी के समय में इस मंदिर की प्रतिष्ठा हुई। इस मंदिर में प्रशस्तियों के दो शिलालेखों से ज्ञात होता है कि प्रारम्भ में इस मंदिर का नाम लक्ष्मणविहार था, परन्तु बाद में यह मन्दिर मूर्तिनामानुसार श्री पार्श्वनाथजी के नाम से ही विख्यात हुआ। इस मन्दिर की मूर्ति वि० सं० २ की बनी हुई है और जैसलमेर की प्राचीन राजधानी लोद्रवा से लाई गई है। जब जैसलमेर दुर्ग पर आक्रमण हुआ, उस समय इस मूर्ति को जमीन में रख दी। बाद में जब इसके जीरणोद्धार में बड़ा मंदिर बना। उस समय इस प्राचीन मूर्ति को पुनः स्थापित किया गया। इस मंदिर की प्रशस्ति का

निर्माण साधुकीर्तिराजजी ने, संशोधन वाचक जयसागरगणिजी ने तथा खुदाई कार्य सूत्रधार सिल्पी धन्ना ने किया। इस मंदिर का निर्माण ओसवाल वंशोत्पन्न जेसंग व चोपड़े साहू तथा सेठ नरसिंह व भोजराज हर-राज ने कराया। इसे तैयार होने में १४ वर्ष लगे थे।

श्री जिनसुखसूरिजी अपने जैसलमेर चैत्यपरिपाटी में इस मंदिर की बिंब संख्या ६१० लिखते हैं परन्तु वृद्धिरत्नजी ने "वृद्धिरत्नमाला" में इस मंदिर की मूर्ति संख्या १२५२ लिखी है।

इस मंदिर की अद्वितीय प्रस्तर कला तो देखने योग्य है ही, परन्तु प्रवेश द्वार के पास खड़े तोरण पर खुदी विभिन्न मूर्तियों की भाव भरी मुद्राएं इतनी आकर्षक है कि प्रत्येक कला प्रेमी मन्त्रमुग्ध सा देखता ही रहता है।

श्री संभवनाथजी :-

इस पुनीत देवस्थान का निर्माण कार्य जिनभद्रसूरि जी के उपदेश से चोपड़ा गोत्रीय सा० हेमराज पूना आदि ने संवत् १४९४ में प्रारम्भ कराया और यहां के कुशल कारीगरों ने बड़ी तत्परता से तीन वर्ष पर्यात् संवत् १४९७ में पूर्ण किया। इस मंदिर की प्रतिष्ठा भी जिनभद्रसूरिजी ने ही वि० सं० १४९७ में बड़ी धूमधाम से कराई। प्रतिष्ठा के समय तत्कालीन महारावल श्री वैरसीजी ने भी बड़ी श्रद्धा के साथ स्वयं उपस्थित रहकर समस्त शुभकार्य सम्पन्न कराये। इस मंदिर की प्रशस्ति का निर्माण वाचनाचार्य श्री सोमकुंवरजी ने, प्रस्तर पर लिखने का कार्य भानुप्रभगणि ने तथा खुदाई का कार्य सिलावट शिवदेव

ने किया। श्री जिनसुखसूरिजी ने इस मंदिर की बिंब संख्या ५५३ और श्री वृद्धिरत्नजी ने ६०४ लिखी है।

यह मंदिर भी प्रथम मंदिर की तरह शिल्प एवं स्थापत्य कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण है ही परन्तु इसका प्रमुख आकर्षण "जिनभद्रसूरि ज्ञान भंडार" है। इसी प्राचीन भंडार को देखने के लिये जैन यात्रियों के अतिरिक्त हजारों देशी अथवा विदेशी विद्वान इस प्राचीन नगर में आते हैं और अपनी ज्ञान पिपासा को शान्त करते हैं। वस्तुतः यह विश्वविख्यात ज्ञान भंडार प्रत्येक विद्वान के लिये देखने योग्य है।

श्री शीतलनाथजी का मन्दिर :-

इस मन्दिर का निर्माण किस व्यक्तिविशेष ने कराया इस विषय में निश्चयात्मक जानकारी प्राप्त नहीं हुई है। फिर भी जैसलमेर चैत्य परिपाटी स्तवनों और पट्टिका के लेख से इतना अवश्य ज्ञात होता है कि इस मन्दिर का निर्माण डागा गोत्रीय सेठों ने कराया। परन्तु अभी अभी मेरे अनुज ब्रजरतन से प्राप्त सेवक लक्ष्मीचंद रचित जैसलमेर तवारीख के पृष्ठ २०८ में दिये जैन मदिरों के हाल को देखने से ज्ञात हुआ कि उक्त मन्दिर का निर्माण डागा लूणसा मूणसा ने वि० सं० १५०६ में कराया। वृद्धिरत्न माला के पृष्ठ ४ के अनुसार इस मन्दिर की प्रतिष्ठा सं० १५०८ में हुई।

इस मंदिर में कोई प्रशस्ति नहीं है। श्री जिनसुखसूरिजी रचित चैत्य परिपाटी में इस मंदिर में ३१४ मूर्तियां होने का तथा वृद्धिरत्नमाला

में ६०७ मूर्तियाँ होने का उल्लेख मिलता है। [illegible]
यह मंदिर भी देखने योग्य है।

श्री शांतिनाथजी और अष्टापदजी के मंदिर –

ये दोनो मन्दिर एक ही प्राङ्गने में बने हुए हैं। [illegible] भाग में श्री शान्तिनाथजी का और नीचे श्री अष्टापदजी का मन्दिर है। नीचे वाले मन्दिर में १७ वें तीर्थंकर श्री कुंथुनाथजी की मूर्ति मूल-नायक रूप में प्रतिष्ठित है। इन दोनों मन्दिरों की एक ही प्रशस्ति है जो राजस्थानी मिश्रित तत्कालीन भाषा में लिखी है। इन दोना मंदिरों का निर्माण संखवालेचा और चोपड़ा गोत्रीय सेता और पांचा ने कराया खरतर गच्छ के जिनसमुद्रसूरिजी ने वि० सं० १५३६ में इसकी प्रतिष्ठा कराई।

संघवी सेता अत्यधिक धनाढ्य और प्रभु भक्त था। इसी ने सकुटुम्ब कई बार शत्रुंजय, गिरनार, आबू आदि तीर्थों की यात्रा की और श्रीसंभवनाथजी के मन्दिर की प्रसिद्ध तपपट्टिका की प्रतिष्ठा कराई। उन दिनों जैसलमेर की गद्दी पर महारावल देवीदास जिसका नाम देवकरण मिलता है, विराजमान थे। इस मन्दिर की प्रशस्ति का निर्माण देवतिलकजी उपाध्याय ने और खुदाई कार्य चतुर शिल्पी सेता ने किया।

श्री जिनसुखसूरिजी ने चैत्य परिपाटी स्तवन में श्री शान्तिनाथजी के मंदिर की मूर्ति संख्या बाहर प्रदक्षिणा में २४० और चौक में ४०० कुल ६४० लिखी हैं परन्तु वृद्धिरत्न माला में बिंब संख्या ८०४ मिलती

है। इसी प्रकार अष्टापद जी के मन्दिर की मूर्ति संख्या जिनसुखसूरिजी ४२५ लिखते हैं तथा वृद्धिरत्नमाला में ४४४ होने का निर्देश मिलता है।

इस मन्दिर के दाहिनी तरफ पाषाण के कलापूर्ण दो सुन्दर हाथी बने हुए हैं। जिन पर एक पुरुष व दूसरी स्त्री की धातु मूर्ति आसीन है। सम्भवत: ये दोनों धातु मूर्तिएँ मंदिर प्रतिष्ठा कराने वाले स्व० खेता व उसकी भार्या सरस्वती की हो। इसी मंदिर में दशावतारों सहित श्री लक्ष्मीनाथजी की मूर्ति भी स्थापित की हुई है। प्रशस्ति की पंक्ति संख्या ३९, ४० और ४१ से ज्ञात होता है कि ये मूर्तियां महारावल श्री देवीदास जी के ज्येष्ठ पुत्र महारावल श्री जैतसिंहजी की आज्ञा से स्थापित की गई है।

प्रस्तर कला की दृष्टि से ये दोनों मन्दिर देखने योग्य हैं। श्री शांतिनाथजी के मन्दिर के बाहर की ओर खुदी भावभरी मूर्तियां तो बहुत ही कलापूर्ण और आकर्षक है।

श्रीचन्द्रप्रभस्वामीजी का मंदिर :-

इस भव्य त्रितले मन्दिर का निर्माण किसने कराया इस विषय की कोई प्रशस्ति देखने को नहीं मिलती। परन्तु निज मूर्ति पर के लेख से ज्ञात होता है कि भणशाली गोत्रीय सा. वीदा ने वि. सं. १५०९ में इस मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई थी। चैत्य परिपाटी स्तवनों में भी भणसाली गोत्रीय द्वारा मन्दिर बनवाये जाने का उल्लेख मिलता है। अतः सम्भव है सा० वीदा ने ही उक्त मंदिर का निर्माण कराया हो। इस मंदिर के प्रत्येक तले में चौमुखी जी विराजमान है।

श्री जिनसुखसूरिजी ने चैत्य परिपाटी में इस मन्दिर की मूर्ति संख्या ८०६ लिखी है परन्तु वृद्धिरत्नमाला में बिंब संख्या १६४५ होने का उल्लेख मिलता है।

प्रस्तर कला की दृष्टि से यह मंदिर देखने योग्य है ही परन्तु इस मन्दिर के दूसरे तले की बाँई तरफ की कोठरी में बहुत सी सर्वधातु की मूर्ति, चौबीसी और पंचतीर्थियों का संग्रह अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इन पर खुदे लेख इतिहास के विद्यार्थियों के लिये बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। इस प्रकार की अमूल्य सामग्री इन मंदिरों में न जाने कितने ही गुप्त स्थानों पर दबी पड़ी होगी जिसका आज तक हमें पता नहीं है।

श्री ऋषभदेवजी का मन्दिर :-

इस मन्दिर की मूर्तियों पर अंकित लेखों से ज्ञात होता है कि उपर्युक्त देवस्थान का निर्माण गणधर चोपड़ा गोत्रीय सा. सच्चा के पुत्र धन्ना ने महारावल देवीदास के राजत्वकाल में वि. सं. १५३६ में कराया और खरतरगच्छ के आचार्यों ने वि. सं. १५३६ फागण शुक्ला ५ को इस मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई। इस मन्दिर की भी कोई प्रशस्ति देखने को नहीं मिली।

श्री जिनसुखसूरिजी की चैत्य परिपाटी में ६३१ व वृद्धिरत्नमाला में ६०७ मूर्ति होने उल्लेख मिलता है।

श्री महावीरस्वामी का मन्दिर :-

यह मन्दिर पूर्व वर्णित मन्दिरों से कुछ दूरी पर चौगान पाड़े

में बना हुआ है। इस मोहल्ले में यह एक ही जैनमन्दिर है। यहां के शिलालेख से ज्ञात होता है कि इस देवस्थान का निर्माण सं. १४७३ में हुआ। श्री जिनसुखसूरिजी के लिखेनुसार इस मन्दिर की प्रतिष्ठा ओसवंश के वरड़िया गोत्रीय सा. दीपा ने कराई। इस मन्दिर की मूर्तियों की संख्या २३२ है परन्तु वृद्धिरत्नमाला में २६५ मूर्तियां होने का उल्लेख मिलता है।

प्रस्तर कला की दृष्टि से यह मन्दिर पूर्ववर्णित मन्दिरों सा महत्वपूर्ण एवं आकर्षक नहीं हैं।

दुर्ग स्थित इन आठ जैनमन्दिरों के अतिरिक्त इन्हीं के समकालीन बने हुए कई एक दर्शनीय कलात्मक हिन्दू मन्दिर भी है जिनका परिचय आगे दिया जायगा।

शहर के जैनमन्दिर

श्री सुपार्श्वनाथजी का मन्दिर :-

शहर में स्थित जैनधर्मशाला से स्वल्प दूरी पर कोठारी पाडा मे यह मन्दिर बना हुआ है। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा तपगच्छ के सुप्रसिद्ध आचार्य श्री हीरविजयसूरिजी की शाखा में गुलालविजयजी के शिष्यद्वय श्री दीपविजयजी और नगविजयजी ने वि सं. १८६६ मे कराई। मन्दिर की प्रशस्ति भी श्री नगविजयजी ने ही लिखी थी। यह प्रशस्ति बहुत ही पाण्डित्यपूर्ण है और क्लिष्ट संस्कृत भाषा मे लिखी हुई है।

श्री विमलनाथजी का मन्दिर :-

यह मन्दिर जैनधर्मशाला मे थोडी दूरी पर दासोत पाडा में आचार्यगच्छ के उपासरे मे बना हुआ है। मन्दिर प्रतिष्ठा की कोई प्रशस्ति प्राप्त नही हुई। मूलनायक की मूर्ति पर अंकित लेख से ज्ञात होता है कि तपगच्छआचार्य श्री विजयसेनसूरिजी के करकमलो से वि स १६६६ पोष कृष्णा ६ भृगुवार को प्रतिष्ठा कार्य सम्पन्न हुआ था।

दुर्ग और शहर स्थित पूर्ववर्णित १० मन्दिरों के अतिरिक्त अन्य महत्वपूर्ण मन्दिर अमरसागर, लोद्रवा, ब्रह्मसर और देवीकोट मे बने हुए हैं। यात्रियों की सुविधा के लिये यहाँ क्रमशः अमरसागर, लोद्रवा, ब्रह्मसर और देवीकोट के जैनमन्दिरों का परिचय दिया जा रहा है।

अमरसागर के जैनमन्दिर

श्री आदीश्वरजी के मन्दिर :-

जैसलमेर शहर से तीन मील की दूरी स्थित सघन आम्रवृक्षों से आच्छादित महारावल अमरसिंह का बनाया अमरसागर नाम का बांध और उपवन है। इसी अमरसागर में तीन जैनमंदिर हैं और तीनों के मूलनायक श्री आदिश्वरजी है।

प्रथम मन्दिर जो सड़क के किनारे मुनि डूगरसीजी की बेरी के पास है, पंचायत की ओर से बनवाया हुआ हैं। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा सं. १९०३ की फाल्गुन शुक्ला पंचमी को महारावल श्री रणजीतसिंह जी के समय में हुई। इस मन्दिर में एक प्रशस्ति भी है।

शेष दोनों मंदिरों का निर्माण जैसलमेर के सुविख्यात बाफना (पटुवा) जाति के सेठों ने कराया। छोटे मन्दिर का निर्माण बाफणा श्री सवाईरामजी ने सं. १८९७ में और बड़े मन्दिर का निर्माण श्री हिम्मतरामजी बाफणा ने वि सं. १९२८ में कराया। बड़े मन्दिर की प्रतिमा कोट विक्रमपुर से लाई गई हैं जो ड़ेढ हजार वर्ष पुरानी है। इन दोनों मंदिरों की प्रतिष्ठा खरतरगच्छाचार्य श्री जिनमहेन्द्रसूरिजी के करकमलों से सम्पन्न हुई। बड़ा मन्दिर बहुत ही विशाल और दो मंजिला

बारीक कोरनी का झरोखा

बना हुआ है।
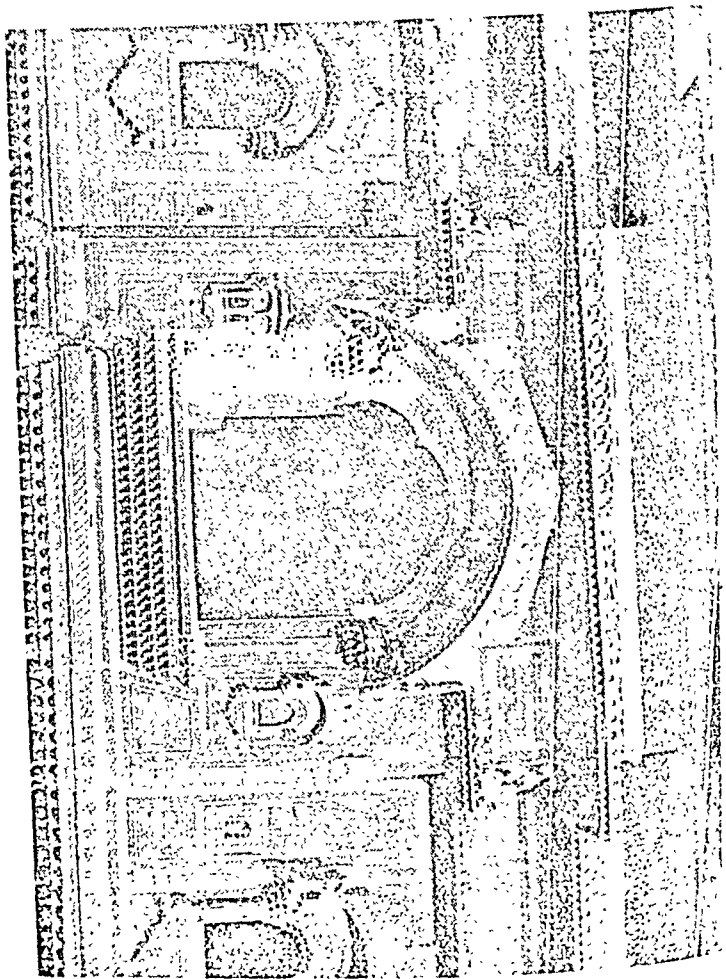
चित्रकला की दृष्टि से ये प्रत्येक मंदिर जैसलमेर दुर्गस्थित जैन मंदिरों से किसी भी प्रकार कम नहीं है। इस मंदिर के सामने वाले छज्जों, झरोखों और गवाक्षों पर खुदी कलापूर्ण सूक्ष्म जालियाँ देखने योग्य है। इन मंदिरों की सुन्दर शिल्पकला के विषय में श्री पूर्णचन्द नाहर ने लिखा है—"विशाल मरुभूमि में ऐसा मूल्यवान भारतीय शिल्पकला का नमूना एक दर्शनीय वस्तुओं की गणना में रखा जा सकता है।"

इस मंदिर में प्रशस्ति के अतिरिक्त पीले पाषाण में खुदा हुआ तीर्थयात्रा के संघ वर्णन का ६६ पंक्तियों का एक दीर्घकाय शिलालेख है। इस लेख का प्रकाशन पुरातत्ववेत्ता मुनि श्री जिनविजय जी द्वारा संपादित "जैन संशोधक" पत्रिका के प्रथम खंड के पृष्ट १०८-१११ तक 'जैसलमेर के पटवों के संघ का वर्णन' शीर्षक लेख में हुआ है।

उक्त दोनों मंदिर अमरसागर तालाब के पूर्व दिशा की ओर बने हुए है। जब वर्षा ऋतु में जब तालाब भर जाता है उस काल पानी के मध्य स्थित इन दोनों मंदिरों की शोभा दर्शनीय होती है।

लोद्रवा के जैनमन्दिर

श्री पार्श्वनाथजी का मन्दिर :–

जैसलमेर नगर से १० मील तथा अमरसागर से सात मील की दूरी पर स्थित जैनियों का प्रसिद्ध तीर्थ स्थान लोद्रवा जैसलमेर की प्राचीन रजाधानी कहा जाता है। यहाँ पर लोद्र शाखा के राजपूत राज्य करते थे और उन्हीं के नाम से इस स्थान का नाम लोद्रवा पड़ा। इतिहास का सिंहावलोकन करने से ज्ञात होता है कि इस प्राचीन स्थान पर सर्व-प्रथम भाटी रावल देवराज ने सं. १०८२ के लगभग यहाँ के अधिकारी लोद्र राजपूतों को हराकर अपनी राजधानी बनाई जो रावल जैसलजी के जैसलमेर बसाने के पूर्व तक रही। उन दिनों यह नगर बहुत ही समृद्धिशाली था और इसके चारों ओर १२ प्रवेश द्वार थे। परन्तु आज वहाँ पर मंदिरों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। पुरातत्वान्वेषियों के लिये यह स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है

यहाँ पर प्राचीन काल से ही श्री पार्श्वनाथ जी का मन्दिर है। जिस काल महारावल जैसलजी ने अपने भतीजे भोजराज के गद्दीपर बैठने के पश्चात मोहमद गोरी की सहायता से लोद्रवा पर आक्रमण किया था, उस समय इस नगर को लूटा गया और मन्दिर को भी

कल्पवृक्ष लोद्रवा (अभय जैन ग्रंथालय से साभार)
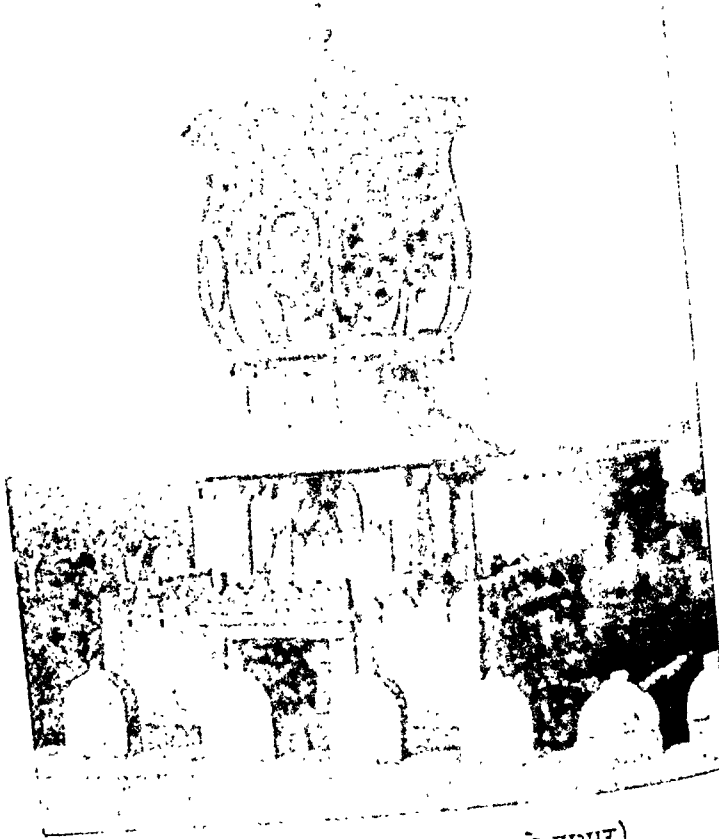
पर्याप्त हानि हुई। इसी ध्वस्त मन्दिर का भणसाली थाहरुशाह ने सं. १६७५ में पुनरुद्धार कराके वर्तमान मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा खरतरगच्छाचार्य श्री जिनराजसूरिजी ने कराई। उक्त मन्दिर के एक ही आहते में मेरु पर्वत के भाव पर बने हुए मूलमन्दिर श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथजी के चारों ओर चार छोटे मन्दिर हैं। ये चारों मन्दिर मूल मन्दिर के—

१. दक्षिण पूर्व में
२. दक्षिण पश्चिम में
३. उत्तर पश्चिम में और
४. उत्तर पूर्व दिशा में अवस्थित है।

उपर्युक्त चारों मन्दिरों को थाहरुशाहजी ने अपनी स्त्री, पुत्री, पुत्र और पौत्रादि के पुण्यार्थ सं. १६९३ में बनवाया। परन्तु मूर्तियों पर उत्कीर्ण लेखों से ज्ञात होता है कि प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा मूलमन्दिर के साथ सं. १६७५ में ही हो गई थी।

मन्दिर नम्बर ३ व ४ के मध्य एक त्रिगड़ा पर ऊपर अष्टापदजी के भाव का धातु का दर्शनीय कल्पवृक्ष बना हुआ है जो नाना प्रकार के पत्तों से लदा हुआ बहुत ही सुन्दर लगता है। मूलमन्दिर के सभामण्डप में सहजकीर्ति गणि नाम के किसी विद्वान का लिखा हुआ शतदलपद्म यंत्र की प्रशस्ति का शिलापट्ट लगा हुआ है। चमत्कार काव्य की दृष्टि से इस शतदलपद्मयंत्र की प्रशस्ति अपूर्व है। इस यंत्र के पच्चीस चतुष्पद श्लोकों के सौ पंखुड़ियों के रूप में भी पढ़ते हैं और

प्रत्येक चरण का अंतिम अक्षर यंत्र के मध्यस्थित केवल "मं:" अक्षर है। समस्त पदों के अंतिम अक्षर का मिलान केवल एक अक्षर से करना कितना दुरूह है, इसकी कल्पना सहज ही में की जा सकती है। श्री नाहरजी ने इस शतदलपद्म यंत्र के विषय में लिखा है— अद्यावधि मेरे देखने में जितने प्रशस्ति शिलालेख आये हैं उनमें अलंकार शास्त्र का ऐसा नमूना नहीं मिला है।"

सेठ थाहरूसाह ने जिस रथ पर प्रभु मूर्ति को बिठाकर संघ निकाल श्री सिद्धक्षेत्रजी की यात्रा की थी वह प्राचीन रथ अभी तक मन्दिर के आहते में रखा हुआ है।

ब्रह्मसर के जैनमंदिर

श्री पार्श्वनाथजी का मंदिर

ब्रह्मसर जैसलमेर शहर से ८ मील की दूरी पर उत्तर दिशा में अवस्थित है। इसी गाव में महाराज मोहनलालजी की आज्ञा से बागरेचा मनोलखचन्द के पुत्र माणकलाल ने महारावल बैरीशालजी के समय में वि० सं०१९४४ माघ शुक्ला ८ को श्री पार्श्वनाथजी का सुन्दर मंदिर बनवाया जो अन्य मंदिरो की तरह ही दर्शनीय हैं। यह स्थान रामगढ के बीच मे होने के कारण प्रति दिन इस गांव मे मोटर आती है।

देवीकोट के जैनमंदिर

श्री आदिनाथजी का मंदिर

यह स्थान जैसलमेर से बाड़मेर को जाने वाली सडक के मध्य जैसलमेर नगर से २४ मील की दूरी पर दक्षिण पूर्व की ओर अवस्थित है। जैसलमेर के अन्य स्थानों की तरह यह भी बहुत प्राचीन स्थान है। यहाँ पर एक पुराना किला व गरुड़जी का दर्शनीय मंदिर है। इन मंदिरो के अतिरिक्त श्रीसंघ की ओर से बनाया हुआ श्री आदिनाथजी का सुन्दर मंदिर है। इस मंदिर का निर्माणकार्य विक्रम सं० १८६० वैशाख सुदी ७ गुरुवार को महारावल श्री मूलराजजी के राजत्वकाल में हुआ।

बरसलपुर के जैनमंदिर

श्री पार्श्वनाथजी का मंदिर

जैसलमेर से १४० मील तथा बीकानेर से ६२ मील की दूरी पर स्थित बरसलपुर बहुत ही प्राचीन नगर है। यहाँ पर लक्ष्मीनाथजी के मन्दिर के साथ ही श्री पार्श्वनाथजी का मन्दिर है और दोनों का भोग एक ही साथ लगाया जाता है। श्री लखमीचन्दजी सेवक ने जैसलमेर तवारीख के पृष्ठ १८६ पर लिखा है "मन्दिर एक में श्री लक्ष्मीनाथजी व श्री पारसनाथजी शामल विराजे व आरोगे हैं, जुदा करे तो विघ्न हुवै।

इतिहास का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि यहां से दक्षिण पश्चिम दिशा की ओर एक मील की दूरी पर किले से भी ऊँचा एक टीला है जिस पर मुगल बादशाह हुमायूं खड़ा रहा था जब कि उसे यहाँ के किले में नहीं आने दिया था। इतिहास एवं पुरातत्व विद्यानुरागियों के लिये यह प्राचीन स्थान दर्शनीय है।

शहर के देरासर

सेठ थीरूशाहजी का देरासर :-

मेवाड़ के भामाशाह की तरह ही सेठ थीरूशाह जी की भी जैसलमेर में विशेष ख्याति है। इनकी हवेली के पास ही यह देरासर है।

सेठ केसरीमलजी का देरासर :-

यह देरासर बाफणा गोत्रीय इन्दौर वाले सेठो की हवेली में है। यहां की प्रशस्ति के अनुसार इसकी प्रतिष्ठा विक्रम सं. १८०७ में हुई थी।

सेठ चांदमलजी का देरासर :-

बाफणा गोत्रीय रतलाम वाले सेठो की हवेली में यह देरासर है।

अभयसिंहजी का देरासर :-

बाफणा गोत्रीय झालरापाटन वाले सेठ अभयसिंहजी की हवेली में यह देरासर है।

रामसिंहजी का देरासर :-

यह देरासर मेहता रामसिंहजी बरडिया की हवेली में है। मेहता धनराजजी की हवेली में धनराजजी का देरासर है।

शहर के उपासरे

वेगड़गच्छ उपासरा :-

यह उपामरा जीर्ण दशा में है। इसके वाहिर दीवार पर उत्कीर्ण शिलालेख से विदित होता है कि इस उपासरे का निर्माण वि. सं. १६७३ में हुआ। वेगड़शाखा खरतरगच्छीय श्री जिनोदयसूरिजी से वि. सं. १४२२ में निकली थी।

बृहत्खरतरगच्छ उपासरा :-

यह उपासरा जगानी ब्राह्मणों के पड़ोस में बना हुआ है। यहाँ देरासर भी हैं, जिसमें मूलनायक श्री गौड़ी पार्श्वनाथजी है। इस उपासरे में परम पूज्य गुरु महाराज श्री जिनदत्तसूरिजी की चादर सुरक्षित है।

अत्यन्त दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि परम पूज्य यति महाराज श्री वृद्धिचन्द्रजी और उनके सुयोग्य शिष्य श्री लक्ष्मीचन्द्रजी का देहावसान होगया और आज उपासरा बन्द ही रहता है। श्री लक्ष्मीचन्दजी के शिष्य अभी विद्याध्ययन में लगे हुए है अतः उनका निवास जोधपुर अथवा फलोदी ही रहता है।

तपगच्छ उपासरा :-

तपगच्छीय धनाढ्य श्रावकों के वहुत से घर शहर में थे। अतः

इन लोगों ने श्री सुपार्श्वनाथजी के मन्दिर के निर्माण के समय ही उपासरा बनवाया होगा।

उपर्युक्त उपासरों के अतिरिक्त शहर में अन्य बहुत से गच्छवालों के उपासरे हैं, परन्तु यहाँ श्रावकों की संख्या अधिक न होने के कारण आज समस्त उपासरे बन्द पड़े हैं।

आज जैसलमेर के अनेक जैनी जैसलमेर के बाहर बड़े बड़े नगरों में निवास करते हैं और उनके समस्त कारोबार भी वहीं पर उत्तरोत्तर विकसित हो रहे हैं। अगर वे प्रवासी जैनी पुनः इस क्षेत्र में कोई छोटा-मोटा उद्योग खोले तो हजारों जैनी पुनः इस क्षेत्र में आकर बस सकते हैं।

आशा है इस ओर प्रवासी जैन समाज अवश्य कुछ विचार करेगा और इस पुण्य भूमि को आबाद करने हेतु आशा जनक कदम उठायेगा।

दादा स्थान

जैसलमेर के प्राचीन स्थान के समस्त दादा स्थानों की खोज करके प्रत्येक का परिचय देना तो कठिन है। यहाँ पर उन महत्वपूर्ण दादा स्थानों का परिचय दिया जा रहा है जिनकी आज भी बड़ी श्रद्धा के साथ पूजा होती हैं।

शहर के उत्तर में देदानसर दादाजी, गामगड़ा दादाजी है। इन दोनों दादा स्थानों के मध्य एक छोटी सी पहाड़ी है, इस कारण दोनों स्थानों में एक मील की दूरी है। शहर से उत्तर दिशा की ओर दो मील पर स्थित गजरूपसागर में भी दादा स्थान है।

ब्रह्मसर से एक मील उत्तर की ओर श्री कुशलसूरिजी महाराज का दादा स्थान है। पह स्थान लूणिया गोत्र वालों का बनाया हुआ है। यहाँ के दादा स्थान के विषय में यह प्रवाद बहुत प्रसिद्ध है कि देरावर (जो आज पाकिस्तान में है) का नबाव अपने कोषाध्यक्ष लूणीया गोत्रीय एक श्रावक की दोनों पुत्रियों के रूपलावण्य की प्रशंसा सुनकर षड़यंत्र रचने लगा। जब ये गुप्त समाचार कोषाध्यक्ष को ज्ञात हुए उस समय इस समस्या का समुचित हल न जानकर बड़ा उदास और चिन्तित हुआ। इस आपदा के समय अपनी रक्षा हेतु गुरु नाम स्मरण करते लगा। तत्काल ही गुरुदेव ने साधु के रूप में दर्शन दिये। अपने शिष्य

जैसलमेर के ज्ञानभंडार

जैसलमेर केवल प्रस्तर कला की ही दृष्टि से नहीं अपितु यहाँ के सुविख्यात ज्ञान भंडारों में संग्रहीत प्राचीन ताड़पत्रीय और हस्तलिखित ग्रंथों के संग्रह की दृष्टि से भी विश्वविख्यात है। यहाँ पर कौन कौन ज्ञानभंडार कहाँ कहाँ अवस्थित हैं उनसे अवगत कराने के लिये प्रत्येक का परिचय नीचे दिया जा रहा है : —

जिनभद्रसूरि ज्ञानभण्डार

जैसलमेर दुर्गस्थित श्री संभवनाथ जिनालय के भूमिगृह में अन्धकार पूर्ण एक गुफा के सदृश गुप्त स्थान में यह भंडार अवस्थित है। यह भंडार जैसलमेर के समस्त ज्ञान भंडारों से वड़ा होने के कारण "वड़ा भंडार" के नाम से भी विख्यात है। स्वनामधन्य खरतर गच्छीय आचार्य श्री जिनभद्रसूरिजी ने वि० सं० १५०० में खंभात, अल्हणपुर पाटण आदि विविध स्थानों से प्राचीन ताड़पत्रीय एवं हस्तलिखित प्रतियों का संग्रह करके इस भंडार की स्थापना की। इसलिये इस भण्डार का नाम "जिनभद्रसूरि ज्ञान भंडार" पड़ा। यह भंडार प्राचीनतम हस्तलिखित ग्रथों की उपलब्धि के कारण समग्र भारत में अग्रगण्य है।

दिनांक ३१-३-५५ को जब हमारे राष्ट्रपति स्व. डा० राजेन्द्रप्रसाद जैसलमेर पधारे उस समय इस भंडार स्थित प्राचीनतम सामग्री को देख

से प्रभावित हुए और आम सभा में भाषण देते हुए कहा —

"इसने (जैसलमेर ने) हमारे देश के विपत्ति काल में भी पुस्तकों व ग्रन्थो को काफी आश्रय दिया। अगर इस प्रकार का आश्रय इन ग्रन्थों को न मिला होता तो वे पूर्णतया लुप्त हो गये होते। हम सब भारतवासी इस बात के लिये आपके जैसलमेर के ऋणि है।"

इस सर्वोत्कृष्ट भंडार में उपलब्ध हस्तलिखित ग्रन्थों [illegible] पट्टिकाओं की संख्या इस प्रकार है :—

ग्रन्थों की संख्या :-

१. ताड़पत्रीय – ४२६

२. कागज के – २२५७

ताड़पत्रीय ग्रन्थों की लंबाई चौड़ाई :-

१. अधिकतम लंबाई — ३८॥" × ३॥"

२. न्यूनतम लंबाई — ८।" × २॥"

३. अधिकतम चौड़ाई — ४॥ इन्च

४. न्यूनतम चौड़ाई — १॥ इन्च

लेखन संवत :-

	ताड़पत्र	कागज
(१) प्राचीन	— वि० सं० ११९७	— वि० सं० १२७९
(२) अर्वाचीन	— वि० सं० १७४५	— वि० सं० १९८९

ग्रन्थों की भाषा :-

प्राकृत, मागधी, संस्कृत, अपभ्रंश, व्रज, आदि।

ग्रन्थों के विषय :-

जैन साहित्य, वैदिक साहित्य, बौद्धसाहित्य, न्याय, अर्थशास्त्र, कोष, वैद्यक, ज्योतिष, दर्शन, मीमांसा आदि।

कुछ विशेष ग्रन्थों के नाम :-

भगवतीसूत्र, नैषधचरित महाकाव्य, नागानन्द नाटक, अनर्घ-राघव नाटक, वेणीसंहार नाटक, वासवदता, भगवद्गीता भाष्य, पातं-जलि योग दर्शन, कौटिल्य अर्थशास्त्र, शृंगार मंजरी, काव्य मीमांसा, आदि।

चित्र पट्टिकाएँ :-

ग्रंथों के अतिरिक्त ३६ चित्र पट्टिकाएं है जिनमें त्रिशिष्ठशिलाका की चित्र पट्टिका सर्वोतम है।

प्राचीनतम ताड़पत्रीय ग्रंथ :-

ओघनिर्युक्तिवृति- द्रोणाचार्य रचित वि० सं. ११!७ में लिखी हुई है। इस ग्रंथ की संख्या ८४ है। इसकी पृष्ठ संख्या १०५ है। पत्र संख्या १० से ४६ तक नहीं है। पत्र १०५ पर मल्ल लड़ते हाथियों के चित्र हैं।

कागज का प्राचीनतम ग्रंथ :-

न्याय वार्तिक तात्पर्य टीका- श्री वाचस्पति मिश्र रचित है। इसका रचनाकाल वि. सं. १२७९ है।

उक्त भंडार की अस्तव्यस्त पड़ी हस्तलिखित प्रतियों को भलि-भांति सुरक्षित सन्दुकों अथवा तिजोरियों में रखने के लिये समय समय

पर बहुत से कला प्रेमियों का पूर्ण सहयोग रहा है। पिछले दिनों इस भंडार का पुनः पुनरुद्धार महाराज श्री पुण्यविजयजी ने कर वसलो म वि. सं. २००८ में सम्पन्न हुआ।

बड़ा उपासरा के भंडार :-

खरतरगच्छ के इस बड़े उपासरे में दो ज्ञानभंडार सुरक्षित है। प्रथम यतिवर्य वृद्धिचन्द्रजी की गुरु परंपरा का संग्रह एवं द्वितीय खरतर गच्छ पंचायती का भंडार है। द्वितीय भंडार मे १४ ताडपत्रीय प्रतियां हैं जिनमे दो प्रतियों के काष्टफलक चित्रकला की दृष्टि से दर्शनीय है। कागज की प्रतियों मे वि. सं. १५६२ की लिखी कल्पसूत्र की सचित्र रौप्याक्षरी प्रति विशेष उल्लेखनीय है। इस भडार की बहुत सी प्रतियाँ श्री कल्याणजी गणि की रखी हुई हैं।

डूंगरसीजी का ज्ञानभंडार :-

यति श्री वेलजी की गुरुपरम्परा के उपाश्रय का यह ज्ञान भंडार भी महत्वपूर्ण है। इस भंडार में सुरक्षित उदयविलास, एवं कतिपय रासादि ग्रंथ बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। कुछ एक ग्रंथ तो इस प्रकार के हैं जो अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलते।

थाहरुशाह का ज्ञान भंडार :-

इस भंडार की स्थापना सुविज्ञ श्रावक थाहरूसाह ने वि० सं० १६५६ से वि० सं० १६८४ अर्थात् १५ वर्ष तक बहुत से ग्रंथ लिखवा कर की। इस भंडार की प्रतियों में "थाहरूसाहेन संशोधितम्" उल्लेख मिलता है, जिससे सहज ही ज्ञात हो जाता है कि आप बड़े अच्छे विद्वान थे। इन्होंने

ही लोद्रवा पार्श्वनाथजी के मंदिर का जीर्णोद्धार कराया था।

खरतराचार्यगच्छ ज्ञानभंडार :-

यह ज्ञानभंडार आचार्यशाखा के उपासरे में है। यहां पर ६ ताड़पत्रीय प्रतियाँ एवं कई कागज पर लिखित प्रतियाँ विद्यमान है। यति श्री चूनीलालजी के भी कई बंडल ग्रंथ इस भंडार में सुरक्षित है।

तपागच्छ ज्ञानभंडार :-

यह ज्ञान भंडार तपागच्छ के उपासरे में है। इसके दो भाग है प्रथम सुप्रसिद्ध भंडार एवं दूसरा यतिजी का संग्रह है। पुराने ज्ञान भंडार में ताड़पत्रीय प्रतियाँ एवं कई एक सुन्दर प्राचीन प्रतियाँ सुरक्षित है।

लौकागच्छ ज्ञानभंडार :-

इस भंडार को मुनि जिनविजयजी के पधारने पर श्री हरिसागर-सूरि के प्रयत्न से खोला गया। इस भंडार में भी अन्य कागज की हस्त-लिखित प्रतियों के साथ ५ ताड़पत्रीय प्रतियाँ भी हैं।

इन भंडारों के अतिरिक्त भी जैसलमेर में निवास करने वाले कई एक विद्वान पुष्करणे ब्राह्मणों व वेश्यों के घरों में प्राचीन हस्त-लिखित प्रतियाँ उपलब्ध हैं। परन्तु खेद है कि वे लोग उन्हें दिखाते तक नहीं। अतः वे समस्त अमूल्य ग्रंथ उन्हीं के पास नष्ट होते जा रहे हैं। जिन महानुभावों के पास प्राचीन हस्तसिखित ग्रंथ है उनसे मेरा निवेदन है कि वे अपने देश हित को दृष्टिकोण में रखते हुए साहित्य की उस अज्ञात अमूल्य निधि को अवश्य प्रकाश में लावें।

इन भंडारों के प्राचीन ग्रंथों का जितना सुन्दर एवं सदुपयोग होना चाहिए, उतना नहीं हो रहा है। इसका कारण इस दिशा की ओर सरकार के समुचित साधनों का अभाव है। आज अगर इस दिशा में दर्शकों के आने जाने एवं ठहरने के लिये समुचित व्यवस्था हो तो सैकड़ों विद्वान इन भंडारों में रखे प्राचीन ग्रंथों का लाभ उठा सकते हैं। कम कितने ही विद्वान केवल आने जाने की कठिनाइयों के कारण ही इस दिशा में आने का नाम तक नहीं लेते। अतः मैं राजस्थान सरकार से प्रार्थना करूंगा कि वह इस दिशा की ओर भी स्वल्प ध्यान दे जिससे कि देश के महान् विद्वान इस पुरातन सामग्री का लाभ उठा सके।

दर्शनीय स्थान

जैसलमेर राजस्थान का ही नहीं भारत का एक प्राचीन नगर है। पुरातत्व वेताओं ने किम्वदन्तियों के आधार पर जैसलमेर नगर से १० मील की दूरी पर वैशाखी नाम के स्थान का सम्बन्ध भगवान बुद्ध से बताते हुए यहाँ के रेतीले टीवों के नीचे बौद्ध संस्कृति के कुछ अवशेषों को दबा माना है। आज भी वैशाखी के एक शिव मन्दिर के सामने पड़ा शिलालेख इस तथ्य का साक्षी है। यहां के शिव मन्दिरों को देखने से यह भी ज्ञात होता है कि इस क्षेत्र में शैवमत का काफी प्रचार रहा होगा। यहां के जनमानस का ऐसा विश्वास है कि काक नदी के किनारे ब्रह्मा के पुत्र काक ने तपस्या की थी और उन्हीं के नाम से यह नदी काकनदी कहलाई। जैसलमेर दुर्ग स्थित जैसलू कूवा भी भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन की प्यास बुझाने के लिये अपने चक्र से बनाया था। प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों को देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि ब्रह्मसर में ब्रह्मा ने सभी देवताओं को आमंत्रित कर यज्ञ किया और इस क्षेत्र की भूमि को पावन बनाया। आज भी वैशाखी पूर्णिमा को प्रतिवर्ष यहां मेला लगता है। पूर्णिमा को यहां के कुण्डों से पानी का प्रवाह निकलता है जिसके विषय में कहा जाता है कि यह पानी गंगा से आता है। उस दिन यहां के कुण्डों में स्नान करना, तीर्थ में स्नान करने के तुल्य माना

जाता है। जैन धर्म का तो यह तीर्थ स्थान है ही। विश्व के साहित्यानुरागियों के लिये यहां का "जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार" आकर्षण का केन्द्र रहा है और सेकड़ों देशी विदेशी विद्वानो ने इस भण्डार की मुक्तकंठ से सराहना की है।

जैसलमेर दुर्ग :-

महारावल जैसल ने वि. सं. १२१२ श्रावण शुक्ला १२ को इस चित्रिय कलात्मक दुर्ग की नीव रखकर इसे जैसलमेर राज्य की राजधानी बनाया। इससे पूर्व जैसलमेर राज्य की राजधानी लोद्रवा थी। यह दुर्ग समुद्र की सतह से ९५६ फूट ऊँची एक त्रिभुजाकार पहाडी पर बना हुआ है। स्वर्णिम पत्थरों से बना यह दुर्ग प्रत्येक आगन्तुक का अपनी भव्य स्थापत्य कला से मन मोह लेता है। नीचे से दुर्ग तक जाने के लिये एक धनुषाकार चढ़ाई वाली पथरीली सड़क है जो चार परोलो (दरवाजो) को पार करके दुर्ग में चौक तक पहुंचती है। इन चारो परोलों (दरवाजों) के नाम क्रमशः अखेपरोल, सूरजपरोल, गणेशपरोल और हवापरोल है। किले में सर्वोतमविलास, रंगमहल, गजविलास और मोती महल स्थापत्य कला, पत्थर पर बारीक खुदाई, एवं सोने की कलम के काम की दृष्टि से दर्शनीय है।

इन राजप्रासादों के अतिरिक्त श्री लक्ष्मीनाथजी, रत्नेश्वर महादेव सूर्यभगवान, आदि नारायण (टीकमजी), भगवती शक्ति घटियालराय, कुलराजराजेश्वरी आदि आदि देवी देवताओं के दर्शनीय मन्दिर है। अन्यान्य दुर्गस्थित जैनमंदिरों का वर्णन आगे आ चुका है।

किले के नीचे तलोटी मे भी कई दर्शनीय स्थान हैं। आसनी

रोड से थोड़ी दूर पर बनी महता सालमसिंहजी की हवेली, केला पाड़ा के पास सुविख्यात पटुवों की हवेलियाँ, गोयदानी पाड़ा में श्री नथमलजी की हवेली देखने योग्य है। इन विशालकाय हवेलियों में प्रस्तर की जुड़ाई एवं खुदाई का बहुत ही बारीक तथा सुन्दर काम किया हुआ है। तलौटी में कई दर्शनीय मंदिर भी हैं जिनमें श्री मदनमोहनजी का मन्दिर, मेलाप, इग्यारह मन्दिर, सांवले का मन्दिर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

वर्तमान में जहाँ जैसलमेर दरबार निवास करते हैं, वहाँ जवाहर विलास एवं बादल विलास पत्थर की बारीक खुदाई एवं जुड़ाई की दृष्टि से दर्शनीय है।

इस मरुभूमि में यहाँ के कुशल शिल्पियों ने छीनी और हथोड़ी के माध्यम से निरस पाषाणों में जिस प्रकार कला की रस धारा बहाई है वह अद्वितीय है। कागज पर की गई कोरनी की तरह ही यहाँ के कारीगरों ने पत्थर पर बारीक कोरनी का सुन्दर काम किया है। इसी अतुलनीय कारीगरी को देखने के लिये हजारों मीलों से देशी एवं विदेशी सभी विद्वान तथा कला प्रेमी यहाँ आते रहते हैं।

वैसे तो जैसलमेर के चारों ओर अनेक विशालकाय सरोवर हैं परन्तु मुख्य शहर के पूर्व में गड़ीसर की प्रोल से १ फर्लांग की दूरी पर महारावल घड़सीजी का बनाया हुआ घड़ीसर तालाब देखने योग्य है। जब यह तालाब भर जाता है, उस काल इसके किनारे पर खड़े होकर देखने से चारों ओर जहाँ तक दृष्टि जाती है पानी ही पानी दिखाई देता है। इस तालाब के ठीक बाई तरफ महाराज गजसिंहजी का बनाया

कलापूर्ण "गजमंदिर" देखने योग्य है। जैसलमेर नगर निवासी इसी तालाब का पानी पीते है अतः यह तालाब बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

लोद्रवा :-

लोद्रवा के जैन मंदिरो का वर्णन आगे आ चुका है। इन जैन मंदिरों के अतिरिक्त यहाँ पर लोद्रा राजपूतो के समय का बना एक माताजी का मन्दिर है जो ६०० वर्ष पुराना माना जाता है। इस मन्दिर मे फारसीलिपि में उत्कीर्ण लेख ऐतिहासिक दृष्टि से बड़े महत्व का है।

आज यहाँ पर देखने को केवल उक्त सामग्री ही है, परन्तु नवीं तथा १० वीं शताब्दी में यह १२ दरवाजों वाला विशाल नगर था। वर्तमान स्थिति मे इसके चारों ओर इतने ऊँचे ऊँचे रेत के टीले है कि इसके कुछ भी ज्ञात नही कर सकते। राजस्थान के प्राचीन स्थानों की जिस प्रकार आज पुरातत्व सम्बन्धी शोध हो रही है उसी तरह अगर इस स्थान की भी शोध की जाय तो बहुत प्राचीन सामग्री उपलब्ध हो सकती है। सौन्दर्य की देवी 'मूंमल' यहीं पर निवास करती थी। आज भी "मूंमल की मेड़ी" के भग्नावशेष उस पुरातन प्रेम की याद दिलाते है।

अमरसागर :-

जैसलमेर के पश्चिम में ३ मील पर स्थित अमरसागर नामक सुन्दर स्थान तथा सरोवर है। इस स्थान को महारावल श्री अमरसिंहजी ने ई १६६१ से १७५८ के मध्य अपने राज्यकाल मे बनाया।

यहाँ का तालाब, जैनमंदिर एवं उद्यान देखने योग्य है। वर्षा ऋतु

में चारों ओर वने सुदृढ वांधो के बीच भरा हुआ यह तालाव वहुत सुन्दर दिखाई देता है। इसी तालाव के पश्चिमी किनारे पर वना अमरेश्वर महादेवजी का मन्दिर तथा दक्षिण दिशा में महता हिम्मतरामजी पटुवा द्वारा वनाया हुआ विशाल जैनमंदिर है। इस मंदिर पर जिस प्रकार की वारीक खुदाई का काम किया हुआ है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। तालाव के भरने पर इसके आसपास पानी आ जाता है, उस समय इसका दृश्य इतना सुन्दर लगता है कि दर्शकगण घन्टों देखते रहते हैं।

यहाँ के विभिन्न उद्यानों में आम, जामुन, नींवू, अनार, मोसमी आदि के अतिरिक्त चमेली, गुलाव, गेंडा, मोगरा कणेर, कदंब तथा फूलझड़ी के भी अनेकों वृक्ष हैं, जिनकी मीठी महक, यात्रियों की थकान सहज ही दूर करती है, तथा इस भूमि की उर्वरा शक्ति का भी परिचय देती है। यहाँ पर अमरसिंहजी द्वारा महारानी अनोप कुंवरी के स्मृति में वनाई हुई अनोपवाव भी देखने योग्य है। इस वावड़ी में तालाव से छनकर भीतर का भीतर ही पानी आता रहता है। जब तालाव का और इस वावड़ी का पानी एक सतह पर आ जाता है फिर पानी का वढना वन्द हो जाता है। अतः इसका पानी इतना शीतल एवं स्वच्छ होता है कि इसमें नहाने वाले का पूरा शरीर अच्छी तरह दिखाई देता है।

यहाँ पर डूगरसी जी महाराज की वनाई हुई एक वेरी है जिसका पानी राजघराने एवं नगर के व्यक्ति पीते हैं।

यह स्थान जैसलमेर शहर से कच्ची सड़क द्वारा मिला हुआ है।

मूलसागर :—

महारावल मूलराजजी दूसरे ने वि० सं० १८१८–१८७६ में

अपने राज्यकाल में अपने नाम से उक्त उद्यान बनाया। यह जैसलमेर से पश्चिम दिशा की ओर ५ मील पर स्थित है। जैसलमेर शहर से इस उद्यान तक कच्ची सड़क बनी हुई है। इस बाग की बनावट तथा यहां का झालरा (एक तालाब विशेष) व पत्थर की बनी कुर्सी देखने योग्य है। इस बाग में आम, अमरूद, अनार, अंगूर, नीबू आदि के वृक्षों के अतिरिक्त गुलाब, चमेली, मोगरा आदि के फूल उत्पन्न होते हैं। पुराने लोगों का कहना है कि यहाँ पर बादाम के भी वृक्ष थे। परन्तु आज नहीं है।

बड़ा बाग :-

जैसलमेर से ३ मील उत्तर की ओर बडाबाग नाम का उद्यान है जो यहाँ के राजाओं की श्मशान भूमि है। राजाओं की स्मृति में बने विविध मंडप देखने योग्य है। इन मंडपों में अवस्थित देवलों पर खुदे शिलालेख इतिहास के विद्यार्थियों के लिये बहुत उपयोगी है। ये मंडप पहाड़ी पर स्थित होने के कारण जैसलमेर दुर्ग से अच्छी तरह दिखाई देते हैं।

इन मंडपों के नीचे चारों ओर पहाड़ों की गोद में एक प्राकृतिक झील है। इस झील के बांध का निर्माण महारावल जैतसिंह ने कराया अतः यह "जैतबांध" के नाम से भी विख्यात है।

उक्त झील के पीछे और मंडपों के नीचे बहुत बड़ा बाग है। इस बाग में इतने अधिक और आसपास आम्रवृक्ष लगे हुए हैं कि सूर्य की किरणें भी कठिनता से धरती पर आ पाती है। इस बाग के आमों की यह एक प्रमुख विशेषता है कि इनके छिलके भी बहुत मीठे होते है जो अन्यत्र

कहीं नहीं होते। आम के अतिरिक्त अनार, गूलर, खिरणी, माल्टा, नींबू, मौसमी, फालसा, गूंदा, जामुन, अमरूद आदि उत्पन्न होते हैं। यहाँ अंगूर की भी कई एक लताए हैं। फूलों में गुलाब अधिक होता है।

इस भूमि की उर्वरा शक्ति का परिक्षण किया जाय और वर्षा के पानी को रोककर सदुपयोग किया जाय तो यहाँ कपास, ईख और अन्य फल फूल तथा सब्जियाँ अधिकता से उत्पन्न किया जा सकता है।

तणूकोट :-

जैसलमेर के १०० मील उत्तर की ओर बसे तणोट नामक गांव में वि० सं० ८६२ में महारावल 'तणू' का बनाया हुआ तणूकोट है। यह कोट ऐतिहासिक दृष्टि से देखने योग्य है। तणोट ८ वीं शताब्दी में भाटी राजपूतों की राजधानी थी। यहाँ पर श्री लक्ष्मीनाथजी का भी एक प्राचीन मन्दिर है।

पोकरन:-

जैसलमेर जिले का सब डिविजन पोकरन रेल्वे स्टेशन होने के साथ साथ एक प्राचीन ऐतिहासिक स्थान है। यहाँ पर बालनाथ जी की गुफा, आसापुरा देवी एंव खीवंज माता का मंदिर दर्शनीय है।

उक्त स्थानों के अतिरिक्त गजरूपसागर, भादरिया, तेमड़ेरीराय, नभ का डूंगर, कणोद आदि आदि स्थान भी दर्शनीय है।

राजाशाही के अत्याचारों से पीड़ित हो यहां के पालीवाल जिन अनेकों गांवों को भरेपूरे छोड़कर चले गये थे, वे कलापूर्ण खाली गांव आज भी उस समय की करुण कथा को मूक भाषा में सुनाते हैं।

●

प्रसिद्ध वस्तुएं

जैसलमेर सुन्दर, मजबूत और टिकाऊ पत्थर के लिये विख्यात है। यहाँ के पत्थर की बनी नाना प्रकार की कलापूर्ण वस्तुएं पर्याप्त प्रसिद्ध हैं। विशेष प्रशंसनीय वस्तुओं का विवरण नीचे दिया जा रहा है —

खरलें :-

यहाँ के पीले पत्थर की बनी खरलें संसार भर में प्रसिद्ध हैं। छोटी से छोटी २ इंच तथा बड़ी से बड़ी २० इंच तक की खरलें यहाँ पर बनाई जाती हैं। इन खरलों की यह प्रमुख विशेषता होती है कि कितनी ही सख्त वस्तु की खूब महीन घुटाई की जाय फिर भी पत्थर का अंश नहीं आता। इनकी पालिश इतनी चमकदार और सुन्दर होती है कि देखते ही बनती है।

ओरसिये :-

यहाँ के पत्थर के बने गोल, चकोर, पान के आकार के तथा अन्य नाना भाँति के केसर, चन्दन घोटने के ओरसिये बहुत प्रसिद्ध हैं। इन्हें दूर दूर के भावुक भक्त अपने साथ ले जाते हैं। इन पर केसर, चन्दन की घुटाई बहुत अच्छी होती है।

प्याला और तश्तरी :-

पत्थर के प्याले और तश्तरी बनाने की कला का यहाँ पर इतना

विकास हो चुका है कि पानी से भरा हुआ प्याला पानी पर तैरता है। इन प्यालों का राजस्थान के भूतपूर्व मुख्यमंत्री स्व० श्री जयनारायणजी व्यास तथा भारत के प्रधान मंत्री स्व० श्री नेहरूजी ने भी निरिक्षण किया था और यहाँ कि प्रस्तर कला की भूरि भूरि प्रशंसा की थी।

पिछले दिनों जैसलमेर के प्रसिद्ध प्रस्तर शिल्पी श्री तारदीन के पुत्र हसनअली ने कुरकुरे पत्थर के कोट, कमीज और आस्तीन के बटन बना कर इस कला की ओर लोगों को प्रभावित किया इसी व्यक्ति ने यहाँ पर प्राप्त होने वाले पांच प्रकार के पत्थरों के मनके बनाकर एक माला बनाई है जो कला की दृष्टि से अद्वितीय है। वास्तव में माला के मनकों के रूप में यहाँ की संपूर्ण प्रस्तर संपति का नमूना उक्त कलाकार ने इसमे पिरों दिया है। ये वस्तुएं स्थानीय महारावल साहब ने ३००) में खरीद कर अपने पास रख ली है जिन्हें आज भी दर्शकगण देखकर आश्चर्य करते हैं।

बारीक कोरनी का झरोखा
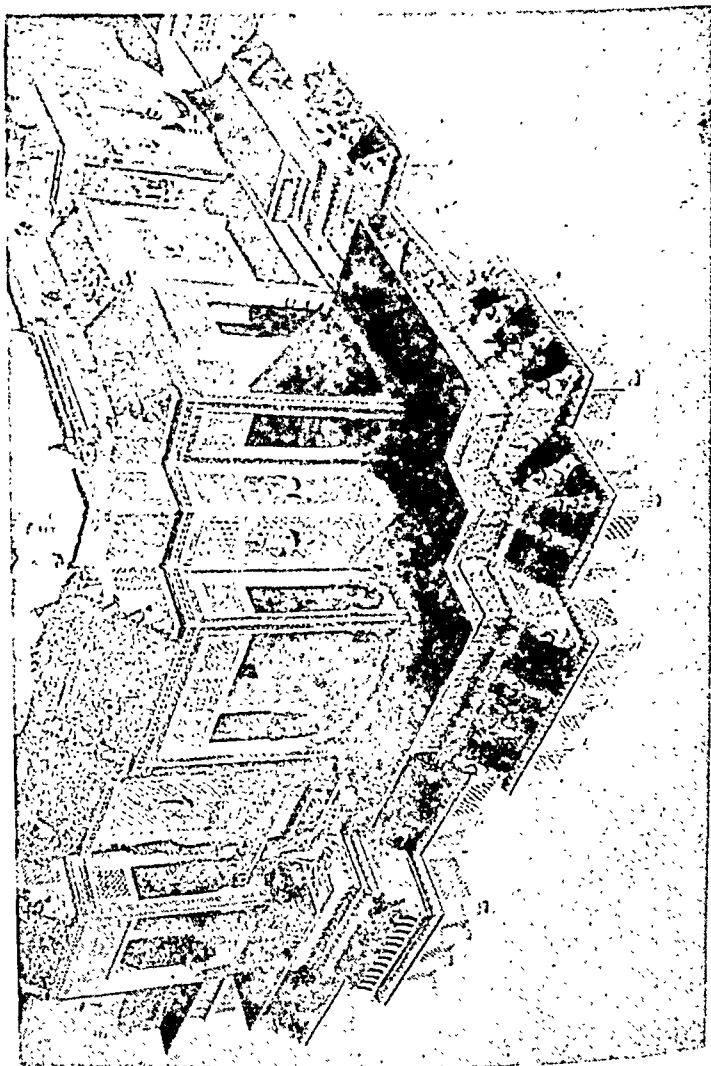
जैसलमेर की शिल्प कला

जैसलमेर राजस्थान के एकीकरण से पूर्व एक पृथक राज्य था और अब यह राजस्थान का एक विशालकाय जिला है। आज से एक हजार वर्ष पूर्व यहाँ के वीर योद्धाओं की धवल पताकाएँ मथुरा, काशी, प्रयाग, गजनी और भटनेर पर फहराती थी, परन्तु बाद में इस तरह नष्ट हो गई कि आज उनका नाम भी जबान पर नहीं आता। समय ने पलटा खाया, शनैः इनका अधिकार भारत के पश्चिमी भाग लोद्रवा, तनोट, और जैसलमेर आदि स्थानों पर ही सीमित रह गया जो आज भी बना हुआ है। यहाँ के विस्तृत बालू रेत के टीलों में मोहन्जोदड़ो और हड़प्पा के समकालीन प्राचीन संस्कृति के चिन्ह प्राप्य है जो इतिहास की बिखरी कड़ियों को जोड़ने में सहायक हो सकते हैं।

यहाँ के वीर योद्धा जितने तलवार के प्रेमी थे, उतने कलानुरागी भी, इस राज्य में अनेकों ऐसे प्राचीन स्थान है जो इस तथ्य की आज भी साक्षी दे रहे हैं। जिस समय दिल्ली, आगरा आदि नगरों में भव्य इमारतों का नाम नहीं था, उस समय यहाँ के कलाकारों ने इस रेगिस्तान में स्वर्ग की सृष्टि की थी। वास्तव में राजपूत शिल्प शैली का उदय भी यहीं हुआ। यही कारण है कि जैसलमेर, लोद्रवा, देवीकोट, तनोट, वसलपुर आदि अनेक प्राचीन स्थानों के खण्डहर आज भी कला मर्मज्ञों को

आश्चर्य चकित करते हैं।

एक समय था भारत में कावुल, कंधार, सिंध और तिब्बत से होने वाला संपूर्ण व्यापार इसी रास्ते से होकर होता था। उस समय यह देश अन्य देशों की तुलना में कितना ही स्मृद्धिशाली था। आज यह सम्पूर्ण प्रदेश धवल वालू की चद्दर ओढ़े सोया पड़ा हुआ है। अवशेष महत्वपूर्ण स्थानों में अब केवल जैसलमेर और लोद्रवा ही रह गया है जिनमें हमें प्राचीन शिल्पकला के उच्चतम चिन्हों के दर्शन होते हैं।

जैसलमेर शहर वहुत लंबा चौड़ा है, परन्तु जनसंख्या कम होने के कारण सूना नजर आता है। शहर के चारों ओर तीन मील के घेरे का ५ से ७ फीट चौड़ा काफी ऊँचा पत्थर का सुदृढ़ परकोटा बना हुआ है। इसके अनेकों वुर्जो पर लगे गोलियों के निशान आज भी इसकी वीरता का परिचय दे रहे है। इसी परकोटे के दक्षिण की ओर २५० फीट ऊँची त्रिभुजाकार पहाड़ी पर आधा मील के क्षेत्र में ९९ वुर्जो का वना सुदृढ जैसलमेर का किला है। यह किला स्थापत्य कला का खजाना है। इसी में यहाँ के सुप्रसिद्ध जैनमंदिर है। आज से ८००-९०० वर्ष पूर्व जैसलमेर शिल्पकला में कितना आगे वढा हुआ था इसका उज्ज्वल उदाहरण हमें यहाँ के हिन्दू-मदिर, जैनमंदिर, राजप्रसाद आदि भवनों को देखने से मिल सकता हैं। प्रकृति ने इस मरु प्रदेश को जितना सुदृढ पत्थर प्रदान किया उतने ही कुशल शिल्पकार भी दिये। इन प्रवीण कलाकारों ने अपनी छीनी और हथोड़ी के माध्यम से प्रस्तर को जो सजीवता प्रदान की है वह सुकवि की कृति से कम सुन्दर नहीं। वास्तव में इन चतुर शिल्पियों ने स्वयं का मोह त्याग अपने जीवन की संपूर्ण

सकला इन्हीं मूर्तियों के निर्माण में अर्पण कर दी है। जिस प्रकार की आकर्षक मूर्तियां यहां देखने को मिलती है वैसी अन्यत्र दुर्लभ तो नहीं पर कठिन अवश्य है। एक ही स्तंभ पर विभिन्न मूर्तियों की मुद्राओं सहित चित्रित करने पर भी उनमें समनता नहीं आ पाई है। वास्तव में मूर्ति कला की यह विशेषता भारत के इने गिने स्थानों पर ही ढूंढने को मिलेगी। १३वी, १४वी, १५वीं, १६वी शताब्दी के बने इन जैनमंदिरों की मूर्तियां जहां भारत की प्राचीन शिल्पकला में साम्य रखने वाली है वहीं अपनी मौलिकता भी लिये हुए है। इन मन्दिरों के निर्माण में कलाकारों ने दिल खोलकर प्रभु के चरणों में कला का प्रसाद चढ़ाया है अतः इनमें कला का उच्चतम रूप देखने योग्य है। पार्श्वनाथजी मन्दिर स्थित तोरण की जाली एवं उसके स्तभो पर खुदी विभिन्न मूर्तियों की भाव भंगिमाएँ इतनी आकर्षक और स्पष्ट है कि दर्शकगण देखते नहीं अघाते। इन प्रस्तर मूर्तियो मे इस प्रकार का भाव भरना कि मूर्ति सजीव हो उठे कलाकारों का मुख्य दृष्टिकोण था। यही कारण है कि इन कलाकारों ने प्रत्येक मूर्ति के अग अग मे अपनी हथौडी और छैनी से अमृत सींच सींच कर इनको अमर बना दिया है।

इन जैन मंदिरों के अतिरिक्त जैसलमेर से १० मील दूर यहां की प्राचीन राजधानी लोद्रवा में लोद्रा राजपूतों के समय मे बने चारो जैन मंदिर कला की दृष्टि से अद्वितीय है। एक हजार वर्ष पुराने इस मंदिर की बनावट देखने योग्य है। मुख्य मन्दिर के द्वार पर बना तोरण तो मानों कला की प्रतिमा ही है। इस तोरण पर जैसी बारीक खुदाई का काम हुआ है, उसका वर्णन शब्दों से परे है। इसका सौन्दर्य तो देखते

ही बनता है। ऐसे अपूर्व तोरण भारत के बिरले ही स्थानों में है। मन्दिर के भीतरी भाग में बनी भिन्न-भिन्न तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ तो एक से एक सुन्दर है। इसी मन्दिर के गर्भद्वार के बायीं तरफ दीवार पर लगा शतदलपद्म यन्त्र साहित्य एवं शिल्पकला की दृष्टि से अद्वितीय है।

सुमात्रा, जावा, आदि द्वीपों में जो प्राचीन भारतीय शिल्पकला का नमूना पाया गया है, उससे यहाँ के जैन मन्दिरों की कारीगरी बहुत मिलती जुलती है।

इन विशाल मन्दिरों की बनावट जितनी कलापूर्ण है उतनी ही सुदृढ़ भी। यही कारण है कि आज हजारों वर्ष व्यतीत होने पर भी ये मंदिर ज्यों के त्यों स्थित है।

मूर्तियों के पश्चात् द्वितीय देखने योग्य वस्तु यहाँ के पत्थरों पर खुदी बारीक जालियाँ है। प्रकृति ने जितना सुन्दर एवं रंग बिरंगा पत्थर प्रदान किया उतनी ही कोमलता भी दी। अतः यहाँ के शिल्पकार जिस प्रकार की सूक्ष्म जाली बनाना चाहते— वैसी ही अपनी छैनी से बना लेते। उत्कृष्ट शिल्पकला के दर्शन जहाँ हमें जैनमन्दिरों में होते हैं वहाँ [illegible] पर खुदी बारीक जालियों के दर्शन हमें [illegible] [illegible] के दर्शन होते है कि जिनका [illegible] नहीं किया [illegible] [illegible] की दृष्टि से [illegible] [illegible] [illegible] सुन्दर से सुन्दर [illegible] [illegible]

ने ही लिये जा सकते हैं, इनकी सुन्दरता का भाव शब्द व्यक्त नहीं कर सकते। इन बारीक जालियों को देखकर शिल्प निपुण विद्वान कहते हैं कि इनमें शिल्पकला की सर्वप्रकार की श्रेष्ठता विद्यमान है।

जैसलमेर के ये जैनमन्दिर और राजप्रासाद ही नहीं, साधारण लोगों के रहने का भी शायद ही कोई ऐसा मकान होगा जिसमें खुदाई व रंगाई का काम न हो। अतः इन मन्दिरों और राजप्रासादों के अतिरिक्त शहर में बनी पटुओं की हवेलियाँ, नथमलजी तथा सालमसिंहजी की हवेलियाँ भी कला की दृष्टि से देखने योग्य है। पटुओं की हवेलियों में किया हुआ बारीक जाली एवं सोने की कलम का काम अपनी समता नहीं रखता। इन हवेलियों के बने झरोखे एक से एक सुन्दर है। यहां के लोग जितने वैभव सम्पन्न और कलाप्रेमी थे तथा कला की उपासना में उन्होंने कितना अर्थ व्यय किया इसका अनुमान इन भव्य इमारतों को देखकर ही लगाया जा सकता है। मुख्य सड़क पर बनी छ मंजिली सालमसिंहजी की हवेली शिल्प एवं स्थापत्य कला की दृष्टि से बड़ा ही सुन्दर है।

सेठ गोविन्ददासजी ने यहाँ तक लिखा है कि "मैंने इतना सुन्दर और बारीक पत्थर का काम इतनी बहुतायत से दुनियाँ के किसी नगर में नहीं देखा।" पुरातत्व साहित्यान्वेषी श्रीपूर्णचन्दजी नाहर ने जैनलेख संग्रह (जैसलमेर) में शिल्पकला का वर्णन करते हुए लिखा है—मंदिर के ऊपर खुदे हुए मूर्तियों के आकार बहुत ही अनुपात याने परिमाण में है। यही कारण है कि ऊपर से नीचे तक संपूर्ण दृश्य चित्ताकर्षक है। इसके किसी भी स्थान में सौन्दर्य की कमी नहीं पाई जाती।

इसमें यह भी विशेषता है कि बहुत सी मूर्तियों के रहने पर भी दृश्य भयंकर अथवा सघन नहीं दिखाई पड़ते।"

जैसलमेर शिल्पकला की दृष्टि से जितना महत्वपूर्ण स्थान है उतना ही स्थापत्य कला की दृष्टि से भी। आज भी इस राज्य में ४० मील के घेरे में वासणपीर, खींया, काठोड़ी, मंधा, और वाप आदि ऐसे अनेकों ग्राम हैं जिनमें शिल्प एवं स्थापत्य कला की उत्कृष्टता भली भांति दृष्टिगोचर होती है। इन गांवों के पालीवाल ब्राह्मण बहुत ही धनाढ्य थे और उन्होंने अपना अर्थ भवन एवं मन्दिर निर्माण में लगाया जो आज भी उनकी यश गाथा गा रहे हैं। किन्तु दुर्भाग्यवश इन गांवों में अधिकांश गांव आज उजाड़ है।

आधुनिक युग में हिम्मतरामजी का बनाया हुआ अमरसागर में स्थित जैनमंदिर बारीक खुदाई की दृष्टि से अद्वितीय है। इसकी बारीक खुदाई को देखते देखते मन नहीं भरता। मुख्य शहर में बने जवाहिर निवास, गजविलास, जवाहर विलास, बादलविलास आदि भवन शिल्पकला की दृष्टि से दर्शनीय है।

आज से कुछ वर्ष पूर्व इस कला का विख्यात कलाकार मालीन हुआ है, जिसकी बनाई हुई वस्तुएँ लंदन के संग्रहालय तक पहुँची हुई है। इसी के लड़के हसनअली ने यहां के पीले पत्थर के कमीज व कोट के बटन व आस्तीन के कट बनाये हैं जो हाथी दांत के बटनों से कम सुन्दर नहीं। पानी पर तैरने वाला पत्थर का प्याला और तश्तरी दोनों इसी ने बनाये है।

वास्तव में मरुप्रदेश में स्थित जैसलमेर की शिल्पकला, स्थापत्य कला एवं सूक्ष्म खुदाई का काम विश्व में अद्वितीय है।

जैन मंदिर का गगन चुम्बी शिखर

शिव पार्वती (पाषाण मूर्तिकला)

साकार हो उठता है । वहां की प्रस्तर कला को देखकर भारती के सपूत सेठ गौविन्द दास ने लिखा है :— "मैंने इतना सुन्दर और वारीक काम इतनी वहुतायत से दुनियां के किसी शहर में नहीं देखा था ।'

जैसलमेर जितना शिल्प एवं स्थापत्य कला का दृष्टि से महत्वपूर्ण है उससे कहीं अधिक महत्व इसका साहित्यिक दृष्टि से है । यहां के जिन-भद्रसूरि ज्ञानभन्डार में स्थित प्राचीनतम साहित्य का आज तक कोई भी विद्वान थाह नहीं पा सका। इसी प्राचीन ज्ञानभण्डार का अवलोकन करने के लिये दिनांक ३१-३-५४ को भारत के राष्ट्रपति स्व. डॉ. राजेन्द्रप्रसाद पधारे थे। भारतीय साहित्य संरक्षण में जैसलमेर द्वारा दिये गये महान् सहयोग का वर्णन करते हुए आपने कहा कि "यदि जैसलमेर वहुत से हस्तलिखित ग्रंथ जो कठिनाई से प्राप्त होते हैं उन्हें सुरक्षित न रखता तो वे विनिष्ट हो जाते। समस्त भारत इस बात के लिये जैसलमेर का ऋणी हैं कि उसने देश के ज्ञान भण्डार को सुरक्षित रखा ।"

आज हमारे देश में ताड़पत्र एवं कागज पर लिखे प्राचीनतम हस्तलिखित ग्रंथों को सुरक्षित रखने का सौभाग्य इसी भण्डार को प्राप्त है । इस प्राचीन भण्डार में केवल जैनदर्शन विषयक ग्रंथ ही प्राप्त हो ऐसी बात नहीं । जैन दर्शन के अतिरिक्त भी बौद्ध दर्शन, वैष्णव दर्शन, अर्थ-शास्त्र, कोष, वैद्यक, ज्योतिष, न्याय आदि नाना विषयों की एक से एक सुन्दर पुस्तकें प्राकृत, संस्कृत एवं मागधी भाषा में लिखी हुई है जिन्हें भारत के इने-गिने विद्वान ही समझ सकते हैं। ये समस्त हस्तलिखित ग्रंथ ताड़पत्र एवं कागज पर है जिनकी संख्या २६ व २२५७ है। इन ग्रन्थों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिये आज से करीब १००

में डा० ब्लूलर एवं जेकाबी दोनों विद्वान बाड़मेर से ऊंटों पर चढ़ कर इस भण्डार का अवलोकन करने के लिये जैसलमेर आये थे और वहां कुछ दिन लगातार रह कर इस भण्डार के विषय में जानकारी प्राप्त की। इसके पश्चात् श्री मुनि जिनविजयजी, श्री पुण्यविजयजी, श्री पूरणचन्द नाहर, श्री अगरचंद नाहटा, श्री नरोत्तमदास स्वामी श्री बद्रीप्रसाद साकरिया आदि विद्वान इस भण्डार का अवलोकन करने पधारे। उन्होंने समय समय पर मरु भारती, राजस्थान भारती, ज्ञानोदय आदि में प्रकाश डाला है जो पठनीय है। वास्तव में यह भण्डार इस प्रकार के रत्नों से परिपूर्ण है जिनका मूल्य भारत के कतिपय विद्वान ही आंक सकते हैं। इन हस्तलिखित ग्रन्थों के अतिरिक्त इस भण्डार मे ३७ चित्र पट्टिकायें है जिन पर जैन तीर्थंकरो के चरित्र का निर्माण वर्णन है। इन चित्रकाओं के रंगों की आज सैंकड़ों वर्ष व्यतीत होने पर भी इस प्रकार दिखाई देती है मानो आज कल में ही तैयार कराई गई हो। इस भण्डार के अतिरिक्त भी अन्य छः भण्डार है जिनमें तपागच्छ का भण्डार एवं थाहरूशाह का भंडार विशेष महत्वपूर्ण है। परन्तु सबमे महत्वपूर्ण आचार्य जिन भद्रसूरि ज्ञानभडार ही है।

प्रसंगवश इस भडार की स्थापना के विषय मे भी कहना उचित होगा। इस दिव्य भंडार की स्थापना आचार्य महाराज युग प्रधान श्री जिनभद्रसूरि ने यवनों के आक्रमण से सुरक्षा हेतु वि सं० १५०० मे अणहिलपुर पाटण एवं खंभात से ग्रन्थो को लाकर की। तत्पश्चात वि० सं० २००८ में महाराज पुण्यविजय ने इस भंडार का पुनरुद्धार कराया एवं ग्रन्थों को सुव्यवस्थित रखवाया एवं उनके रखने हेतु ऐल्युमिनियम

के डब्बे एवं लोहे की आलमारियां बनवाई।

साथ ही जब हम वहां के लोक साहित्य का अवलोकन करते हैं तो कहना पड़ता है कि जैसलमेर लोक साहित्य का अक्षय भंडार है यहां के लोक साहित्य की शोध न होने के कारण इस का महत्व जन साधारण के सामने न आ सका। यहां की लोक कथायें, व्रत कथायें एक से एक सुन्दर और भावपूर्ण हैं। यहां के लोक गीतों में जैसा आदर्श, उच्च भाव और अनन्य प्रेम देखने को मिलता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। लाखा, चन्देसर, रिणमल और रायधण आदि गीत एक से एक सुन्दर और कलापूर्ण है। इन गीतों में यहां का सांस्कृतिक जीवन दूध में पानी की तरह मिला हुआ है। इन्हीं गीतो के माध्यम से हम यहां की प्राचीन सांस्कृतिक जीवन का पता लगा सकते है। विद्वानों का ऐसा विश्वास है कि जैसलमेर के लोकगीत राजस्थान के प्राचीनतम लोकगीतों में है।

जैसलमेर चित्र शैली में ढोला मरवण

जेमलमेर चित्र शैली में गोपाल

जैसलमेर की चित्रकला

चित्रकला की दृष्टि मे भी जैसलमेर महत्व पूर्ण स्थान है ।

राजस्थानी चित्र कला की विभिन्न विद्वानों ने जिन बारह शैलियों का नामोल्लेख किया है उनमें जैसलमेर चित्र शैली का भी ...स्थान है। यद्यपि आज जैसलमेर शैली के चित्र बहुत कम प्राप्त हैं फिर भी चित्र कला की दृष्टि से वे चित्र अत्यधिक महत्वपूर्ण ...मूल्यवान हैं। राजस्थान के अन्य भागों में चित्र कला के अनेक ... कर रहे हैं और उन्हें अपने अपने क्षेत्र में चित्रों की शोध ... उनका परिचय देने तथा उनके चित्र लेने का भी विविध ... से पूर्ण सहयोग मिल सकता है। परन्तु जैसलमेर मे एक भी ... की संस्था न होने और आस पास के क्षेत्रों की संस्थाओ का ... की ओर ध्यान न होने के कारण वहां का हस्तलिखित साहित्य ... पूर्ण चित्र नष्ट हो रहे हैं और इस काल तक जो अवशेष ... भी है उनका भी परिचय सामने नही आ पाता।

पिछले दिनों जब मे संत साहित्य संग्रह हेतु जैसलमेर गया उस ... चित्र वहां के कलानुरागियों के घरों मे देखने को मिले। ... प्रकृति और भावों की दृष्टि से वे चित्र राजस्थान के अन्यान्य ... के चित्रों की दृष्टि से भिन्न और सुन्दर तथा सजीव थे। चित्र ... श्री रामगोपाल विजयवर्गीय ने भी राजस्थानी चित्र ... के पृष्ठ ३३ पर लिखा है।

"... उत्तरी राजस्थान में जोधपुर की चित्र कला ही प्रधान ... है, तब भी जैसलमेर के चित्रकारो ने रेखाओं के लालित्य ... दिखाई है, वैसी राजस्थान के किसी प्रान्त मे नही पाई ...। जैसलमेर के कलाविदों ने मुगलकला का प्रभाव अपने पर नही

आने दिया और न किसी के अनुकरण की चेष्टा की। जोधपुर निकट होने पर भी अपने प्रभाव से यहां के चित्रों को प्रभावित नहीं कर सका। अपना ही एक अनोखापन इन चित्र में विद्यमान है।"

जैसलमेर के कलानुरागी अधिशाशकों के देहावसान के पश्चात वहाँ पर कोई तरह का संग्रहालय न बना जहाँ पर इस प्रकार की कला-पूर्ण सामग्री एक ही स्थान पर अवलोकन में आ जाती हो। फलस्वरूप जो थोड़े बहुत चित्र राजमहलों की दीवारों और प्रसादों में स्वतन्त्र रूप से रखे प्राप्त होते है उन्हीं का सहारा लेकर जैसलमेर की चित्र शैली का मूल्यांकन किया जाता है। परन्तु इन चित्रों के अतिरिक्त भी वहां के कलानुरागी नागरिकों के महलों में अनेक चित्र प्राप्त होते हैं। स्थापत्य और प्रस्तर कला की दृष्टि से दर्शनीय इन भवनों में लगे जैसल-मेर शैली के चित्र बड़े मनोहर, सरस और कलायुक्त हैं। भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से भी वे चित्र पूर्ण सजीव और मूल्यवान है।

रंग, फूल, पत्र, वृक्ष, मुखाकृति, भवनों आदि के आलेखन में जैसलमेर की चित्र शैली पर जोधपुर, कांगड़ा, के अलावा मुगलशैली का कुछ भी प्रभाव नहीं दिखाई देता। इस समय तक जितने भी चित्र प्राप्त हुए हैं वे राजस्थान के अन्यान्य भागों के चित्रों से विचित्र और अपनी मौलिकता लिए हुए हैं। वहाँ के चित्रों में पुरुषों के मुख पर दाढ़ी, मूछों की नीलिमा तथा मुखाकृति ओज और वीरता से परिपूर्ण दिखाई गई है। सिर पर पहनी पगड़ियाँ विशेष प्रकार से बांधी हुई तथा पीछे की ओर झुकी हुई दिखाई गई है। शरीर तने हुए और शक्तिशाली चित्रित किए गए है जो वहां की वीरता की ओर इंगित करते है। नारी

इनके दरबार में अच्छे अच्छे कवि और विविध विषयों के ज्ञाता रहते थे जिन्होंने उत्कृष्ट साहित्य सृजन करके अपनी विवेकता का परिचय दिया। संभव है जैसलमेर दरबार के पास प्राचीन हस्तलिखित संग्रहालय में विभिन्न चित्रकारों के नाम उपलब्ध हो।

इस सामग्री के अतिरिक्त अनेकों चित्र पट्टिकाएं भी जिनभद्रसूरि ज्ञान भण्डार में हैं, जो प्राचीन चित्रकला की दृष्टि से दर्शनीय है। विविध हस्तलिखित ग्रथों में भी चित्र बड़े ही सजीवता के साथ चित्रित किये गये है।

लोक जीवन में भिति चित्रों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। भीति चित्र प्राय: घर के प्रवेश द्वारों के दोनों ओर तथा बैठक और पूजा स्थानों पर चित्रित किये गये होते है। पोकरन के भीति चित्र इस दृष्टि से दर्शनीय है। लोकलाकारों ने लोक कला का आलेखन इनके माध्यम से बड़ी सजीवता से प्रस्तुत किया है।

जो भी हो इतना तो निर्विवाद है कि जैसलमेर चित्र शैली का राजस्थानी चित्र कला में अपना विशिष्ठ स्थान है और इस कला के विशेषज्ञों को वहां पर प्रचुर सामग्री स्वल्प प्रयास से प्राप्त हो सकती है।

एक उपेक्षित सौन्दर्य स्थली-जैसलमेर

(ले० निरंजननाथ आचार्य)

जैसलमेर एक ऐसी विचित्र और विषमताओं की एकान्त स्वरूपी है जहां एक ओर प्राकृतिक शुष्कता है, तो दूसरी ओर कला सौन्दर्य की सरसता भी। कुछ इसी प्रकार की बातों ने कई दिनों से इच्छा प्रबल कर रखी थी कि इस अद्भुत भूमी के दर्शन किये जाय।

आखिर संयोग आया। फरवरी का महीना, छोटी सी ऐम्बेसेडर कार, उसमें छः सवारियां और उनके भीमकाय बिस्तर। उदयपुर से ४०० मील की लम्बी यात्रा कार की नन्ही जान की मुसीबत हो गयी। परन्तु मूमल और महेन्द्र की प्रेम स्थली के आकर्षण से प्रेरित यात्रियों, बिस्तरा और मौन मोटर कार के बीच किसी न किसी प्रकार समझौता और समन्वय हो गया। ५ फरवरी को कार हमें ले चल दी इस रोमान्सपूर्ण यात्रा के लम्बे पथ पर।

नाथद्वारा निकला, काकरोली, राजनगर पार किया। चारभुजा तथा देसूरी और बाली के हरे भरे क्षेत्र मे होते हुए हम पाली पहुंचे। यहां से दो घंटे मे हम जोधपुर पहुँचे। आज की २५० मील की यात्रा रात्री के १० बजे जोधपुर में ही स्थगित की।

दूसरे दिन प्रातः जल्दी अगली यात्रा के लिये प्रस्थान किया। यहां से पोकरन होकर जैसलमेर पहुँचने के लिये १७५ मील का फासला तय

करना था और साथ ही जैसलमेर शीघ्र पहुँचने की उमंग थी । इस समय पोकरन नामक गांव में भी हमारे मन में विशेष स्थान कर लिया था । कारण अभी हाल के भारत चीन युद्ध में पोकरन के पास स्थित बानासर गांव के एक वीर योद्धा मैंजर शैतानसिंह, युद्ध क्षेत्र में विरो. चित साहस व चेतना और अनुशासन का प्रदर्शन कर स्वर्गीय हुए है। उन्होंने अपने रक्त से हिमालय के श्वेत भाल पर तिलक लगा उसके पौरष बल को जगाया है, हिमालय का जो युगों की शान्ति के कारण खून सफेद हो गया था, उसमें अपने रक्त की लाली लादी है । हिमगिरी के निष्प्राण भीमकाय को अपने प्राण दिये हैं । इस मृत्यु ने देश का मस्तक ऊंचा किया, भारतीय सेना को नैतिक और सामरिक बल दिया । देश की आंखें इस योद्धा की जन्म स्थली पर केन्द्रित हुई ।

यहां लाल पत्थर के मकानों की प्रधानता दिखी । लोगों के स्वास्थ्य और रहन-सहन और भाषा से लगता था कि इस भूमि का हर व्यक्ति शैतानसिंह बन सकता है, सिर्फ अवसर चाहिये । यह भी अनुभव हुआ कि यहीं से जैसलमेर की उस भूमि और जलवायु का प्रारम्भ हो रहा है, जहां युगों से बहादुर 'योद्धाओं' की फसले फलती फूलती और कटती आई हैं ।

मोटर हमें लेकर जैसलमेर की ओर ७४ मील की यात्रा पर चल दी । हमारी आंखें विशाल रेतीले टीलों की तलाश में इधर उधर घूमने लगी । कारण हमारा यही ख्याल बना हुआ था कि जैसलमेर बड़े २ रेतीले टीबों से घिरा हुआ है । परन्तु कुछ ललाई लिये कच्ची चट्टानों, कंकरीली जमीन, कहीं धरातल का रंग भूरा, करीब दो-दो

कुछ ऊंची झाड़ियां, कहीं २ आल, केर और खेजड़ी के पेड़ और इनके बीच इधर-उधर कहीं २ भेड़ बकरियों और गायों के समूह चरते हुए तथा हृष्टपुष्ट गडरिये और ग्वाल दिखे। ऊट इन भेड़ो और बकरियों के बीच अपनी विशेष ऊंचाई के कारण अपनी लम्बी गर्दन पर लगे हुए मुंह को खेजड़ी पर मारते हुए बडा विचित्र लगता था। सड़कों के किनारे मीलों तक न किसी गांव का पता न पीने का पानी।

इसी प्रकार का दृश्य ये आखें देखती रहीं और हम जैसलमेर पहुंच गये। रास्ते में कहीं भी हमारी कल्पना का रेतीला टीला नहीं मिला।

जैसलमेर पहुँचने पर एक साथी ने कहा, आज तो थक गये, कुछ नहीं देखेंगे, आराम करें, कल सुबह चलेंगे।

हमारे दूसरे मित्र ने उत्तर मे चुटकी भरी, वाह रे! डालडा छाप महेन्द्र। सिर्फ १७५ मील की यात्रा इस आराम देह मोटर में बैठे रहने पर इस भूमी जवानी मे हथियार डाल दिये। महेन्द्र एक रात में जैसलमेर ३०० मील की ऊट पर यात्रा किया करता था।

कदाचित उनमें न मूंमल की तड़प थी न जवानी का जोश। वे मौन थे हमने उन पर तरस खा अगला कार्यक्रम आज स्थगित रक्खा।

दूसरे दिन जैसलमेर जिला परिषद् के प्रधानजी हमारे साथ हो लिये मूमल दर्शनार्थ। मूमल के महलों की ओर जो जैसलमेर नगर से करीब १४ मील दूर है प्रस्थान किया। इधर के कच्चे मार्गों पर अम्बेसेडर जैसी कोमल कार का चलना कठिन होने से जीप का प्रयोग किया गया। तीन मील का फासला तय करने पर अमरसागर

पहुंचे। यह सागर तालाव है, पास ही में वगीचा भी जिसमें अमरूद और आम के पेड़ है। जैसलमेर की भूमि में आज विरोधाभास सा लगा, राजस्थान नहर आने पर यह स्थिति भले ही अनुकूल लगे। आज से करीब ३०० वर्ष पूर्व यहां के महारावल अमर-सिंह ने इस स्थल का निर्माण कराया था।

इस जंगल के टेढ़े मेढ़े रेतीले रास्तों में जीप आगे चल पडी और हमें लोद्रवा (लोद्रवपुर) नामक गांव में ले आई। आज से करीव ८०० वर्ष पूर्व "लोद्रवा" एक प्रसिद्ध गांव था, जहां पंवार राजपूत राज्य किया करते थे। जमाने के दौर ने उन्हें यहां नहीं रहने दिया। वे उठ-कर उस स्थल पर आ बसे जो आज जैसलमेर कहलाता है। आज लोद्रवा पारसनाथजी के जैन मन्दिर के लिये प्रसिद्ध है। मन्दिर का प्रवेश द्वार बहुत छोटा है परन्तु भीतर प्रवेश करने पर भव्य तोरण मिलता है। मन्दिर स्थापत्य कला का सुन्दर नमूना है। एक विशेष प्रकार के पत्थर की चमक, कला सौष्ठव में चार चांद लगाती है। एक ओर ऊंचाई पर लोह और लकड़ी की सहायता से वना कल्पवृक्ष की कल्पना का स्वरूप मन्दिर के आन्तरिक वातावरण में विशेष आकर्षण उत्पन्न करता है। मन्दिर का कोई प्रमाणिक परिचय वहां नहीं मिल पाया। पुजारी के मन में जो आया उसे अतिशयोक्तिपूर्ण शैली में कहा और हम सुनते रहे। मन्दिर के कला सौन्दर्य में लीन हमारे मन और मस्तिष्क को याद नहीं उसने क्या कहा और क्या नहीं।

हम सैकड़ों वर्षों के अतीत में मनुष्य की कला के प्रति साधना और धैर्य की कल्पना में खोये मन्दिर के बाहर आये। प्रधानजी ने हमें

जीप की ओर निर्देशित करते हुए कहा बैठिये अब यहाँ से करीब एक मील पर की दूरी पर स्थित 'मू मल' का महल देखने चले। अतीत की स्वर्ग की कल्पना टूट गयी। हम होश मे आये। मालूम हुआ कि हम वर्तमान की वास्तविकता से घिरे हैं। उजड बस्ती और सामने लोहे की बनी मोटी मशीन की जीप जिसमे न रूप, न रग, न स्वर साधना फिर भी हम उसके दास हैं।

हम आतुरता के साथ 'मूंमल'' के महल पहुँच गये उसी जीप में बैठ कर। मू मल और महेन्द्र मानवी कल्पना की कृतिया हो या ऐतिहासिक व्यक्तित्व इस विवाद मे हमने जाना नही चाहा। इसलिये मौके पर जो कुछ समझाया गया उसे हमने सहज भाव से ग्रहण किया, उसमे आनन्द आया। प्रधानजी ने एक छोटे से खडहर जो एक नदी के तट पर स्थित था, की ओर संकेत करते हुए कहा, यह एक महल है जिसमे मूंमल का निवास था। आज यह खडहर की अवस्था में है। इस महल के पीछे ही वह काक नदी है, जो किसी जमाने मे जल से भरपूर थी आज यह सूखी है। अमरकोट का राजकुमार महेन्द्र मूंमल के जो सौन्दर्य की प्रतिमा थी, प्रेम मे आकर्षित हो प्रतिदिन रात्रि को ३०० मील ऊट पर बैठ कर आता और इस नदी को तैरता हुआ पार कर महल मे पहुचता। रात्रि मे प्रेम की लम्बी घडिया बिता, प्रात. होने के पूर्व अमरकोट पहुँच जाता था। कहते २ प्रधानजी ने निराशामय स्वर मे कहा और काफी लम्बी कहानी है इस प्रेम समाधि के पीछे और वे एकायक मौन हो गये।

मूंमल और महेन्द्र की प्रेम गाथा की नाना घटनाएँ हमारे

हृदय पटल पर चलचित्रों की भांति एक २ कर के आने जाने लगी।

प्रेम की पवित्रता और गहराई को चिर स्थायी करने के लिये ताजमहल जैसे भव्य भवन बनाना ही आवश्यक नहीं, वह इन खंडहरों में भी आज अमर है।

बात की बात में पुनः जैसलमेर नगर में आ गये और नगर की कुछ गलियों में पैदल चलने लगे। प्रधानजी हर मकान की ओर हमें देखने के लिये संकेत करते और हम अपने पैरों की दिशाओं की गति को भूल मकानों के मुखद्वार और झरोखों पर नजर जमा देते। हमने देखा कि नगर का हर मकान, बशर्ते वह आज की सीमेन्ट सभ्यता के पूर्व का बना हो, चाहे वह गरीब का हो, चाहे अमीर का, कलात्मकता लिये हुए है। उसकी कला पत्थर पर खुदाई और वह भी बारीक खुदाई के रूप में दर्शनीय थी। इस प्रकार देखते २ हम एक संकरी गली में जिसकी चौड़ाई १० फुट से अधिक नहीं थी पहुँचे और एक भीमाकाय हवेली के सामने आ खड़े हुए।

जैसलमेर की यह हवेली कला और विशालता की दृष्टि से प्रसिद्ध है। यह 'पटुवों की हवेली' के नाम से विख्यात है। अनुमानतः यह २५० फीट लम्बी, १०० फीट चौड़ी, तथा ६० फीट ऊंची होगी। लगभग २०० वर्ष पूर्व इसका निर्माण हुआ था। हवेली के हर भाग में विशालता सम्पूर्ण बाह्य भाग में पाषाण की कठोरता पर कला की कोमलता मन और मस्तिष्क को विभोर कर देने वाली एक अनूठा प्रदर्शनी है।

इसके बाद हम डाक बंगले और आये। डाक बंगले की [illegible]

रेल बुक पर मेरा ध्यान गया और मैं उसे कौतुहल से देखने लगा। उसमें लिखा था कि पिछले दिनों यहां कुछ फ्रेन्च तथा अन्य विदेशी यात्री आये थे। मैंने जिज्ञासामय स्वर में डाकबंगले के जमादार से जो पानी का देखभाल रखने आया था पूछा क्योंजी, ये विदेशी यात्री जैसलमेर के सिवाय यहां और क्या देखते हैं ?

जमादार ने बड़े उत्साह के साथ कहना शुरू किया। "अजी साहब" यहां बहुत सी चीजें हैं देखने की। वे बड़े २ रेत के धोरे देखने आते हैं। उन्हें बड़ा मजा आता है।

दूसरे दिन जैसलमेर के किले की ओर चल दिये। नगर के एक मेन बाजार में होकर गोपा चौक (मंडी) होते हुए किले के मुख्य प्रवेश द्वार सूरजपोल में प्रवेश किया और चार पोलों को पार करते हुए किले में प्रविष्ट हुए।

किले में प्रवेश होने पर एक साथी कुछ पीछे रह गये। घूम कर देखा तो वे खोये हुए से खड़े कहीं टकटकी लगाये हुए थे। दृश्य रंगीन था। महिलायें पनघट की ओर आ रही थीं। रंगीन पोशाक में लुस, सुघड़ गात, सुन्दर चेहरे, तथा गुंथा हुआ केश भार और इन सब पर सधी हुई और छलकती गगरियां। आज के तथाकथित विकास युग में ऐसे दृश्यों का, जो केवल कवि कल्पना की सामग्री रह गये है, साक्षात्कार होना सौभाग्य की बात है। इस दृश्य में हमने इस बात की पुष्टि पाई कि जैसलमेर मानवी सौन्दर्य की प्राचीन लोक कल्पना और मूंमल की जन्म-भूमि होने का आज भी प्रमाण देता है। प्रसन्नता हुई कि यहां का नारी सौन्दर्य अभी [illegible] से दूषित नहीं हुआ है और अखबारों

में छपी हुई खटाऊ वायल की प्रचार तारिकाओं का सा रक्तहीन पीला-पन उसमें नहीं आया है।

किले में काफी वस्ती है। किले की पहाड़ी २५० फीट ऊंची १५०० फीट लम्बी और ७५० फीट चौड़ी है। कहा जाता है कि चित्तौड़ के किले के वाद प्राचीनता, भव्यता, उपयोगिता, कला और सामरिक महता की दृष्टि से जैसलमेर का किला अनुपम है। वात ठीक पाई गई, जैसलमेर शब्द का अर्थ भी यही समझ में आया। यह शब्द कदाचित जैसलमेर : जैसल का पर्व : का अपभ्रंश है। लोद्रवा नामक स्थान से हट कर जैसल नामक रावल ने सन् ११५६ में जव इस पर्वत पर जिस पर किला वसा हुआ है, अपनी राजधानी स्थापित की तव से यह जैसलमेरु या जैसलमेर नाम पड़ा है। पुरानी वस्ती इसी किले के भीतर है।

आगे चल कर देखा कि किले में वसे मकानों पर खुदाई की सुन्दर कला के अलावा कला की दृष्टि से कुछ मन्दिर भी प्रसिद्ध हैं। इनमें से पारसनाथजी के मन्दिर (स्थापित सं० १४७३) में तोरण की कला सुन्दर है। अष्टापद जी के मन्दिर (स्थापित सं० १५२६) वाह्य भाग पर मूर्तिकला विशेषतया नृत्य मुद्राऐं वहुत ही सुन्दर है जो आज के नृत्य विशेषज्ञों की कल्पना से भी परे मालूम होती है। एक दो नृत्य मुद्राओं में अवयवों को ऐसा मोड़ दिया है कि आज आश्चर्य होता है कि क्या उस युग में इस प्रकार की नृत्य मुद्राऐं भी सम्भव हो सकती थी। मन्दिरों की मूर्ति कला में जैसा कि अन्यत्र जैन मन्दिरों में है, धार्मिक सहिष्णुता का भाव दिखा, जिसके परिणाम स्वरूप वैष्णव एवं शाक्त धर्मावलम्बियों के भावों को भी विष्णु, गजानन, देवी आदि का

विशेष ध्यान दिया गया है ।

भारत मे विशेषतया उत्तरीभारत में मन्दिरो की स्थापत्य कला, मुस्लिम आक्रमणकारियो की विनाशवृत्ति से नही बच पाई । परन्तु इस कथन का अपवाद जैसलमेर के किले मे मन्दिरों मे देखा । यहा की शिल्पकला उन आक्रमणो से सुरक्षित रही । परिणामत. आज यहा का हर चित्र स्पष्ट, अमलीन और अखण्ड दीखता है ।

लौटते समय एक स्थान पर किले मे हमने देखा कि पीले पत्थर के गोल पड़े हुए करीब तीन-तीन चार-चार मन वजन के गोलो की लम्बी कतार जमी हुई थी जिसमे से यदि एक भी पत्थर जरा गुड जाय तो किले के नीचे खड़े आदमियों का सफाया हो जाय । पूछने पर मालूम हुआ कि ये पुराने जमाने मे युद्ध मे ये गोले काम करते थे । किले पर चढाई करने वाली फोजो को ऊपर से ये पत्थर के गोले फेक कर मारा और भगाया जाता था । अलाऊद्दीन खिलजी की असफलता का यह एक कारण समझ मे आया ।

जैसलमेर में खादी और ग्रामोद्योगों की प्रगति

भारत में अंग्रेजी राज्य के पश्चात् देश के ग्रामीण उद्योग धंध का क्रमशः ह्रास होता गया। देश के कई हिस्सों में ये धंधे लगभग लु ही हो गये। लेकिन जैसलमेर आवागमन के रास्तों से बहुत दूर हो के कारण यहां के कई धंधे अंग्रेजी राज्य का अन्त होने तक भी मू रूप में रहे। जैसलमेर में ऊन, घी, चमड़ा और रेशों की कई झाड़िय का आज भी विपुल उत्पादन होता है। फलतः इन वस्तुओं के उद्यो धंधे यहां जीवंत रहे और गांवों में उत्पादन होने वाली ऊन की कताई के लिए घर-घर में चरखा बराबर चलता रहा। इन उद्योग धंधों का संगठन और विकास करने के लिए जैसलमेर के कुछ उत्साही रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने 'जैसलमेर जिला खादी ग्रामोदय परिषद' नाम से एक संस्था का संगठन किया, जिसने जिले भर में अपने केन्द्र स्थापित करके इस काम को हाथ में लिया। राजस्थान खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के माध्यम से यह संस्था लगभग दस लाख रुपये की पूंजी से जिले में खादी और ग्रामोद्योगों के विकास के काम में लगी हुई है। स्थानीय देशी ऊन की सफाई, छंटाई, और पिजाई के तरीकों में सुधार करके तथा आवश्यक यंत्रों की सहायता से उसे बढ़िया किस्म की ऊन बनाकर घर-घर में चरखे व करघे द्वारा उसकी कताई व बुनाई की जाती है। यहां की ऊन की शालें, कम्बलें, बरड़ी और पट्टू लाखों रुपये के मूल्य की बिहार और

जैसलमेर में खादी और ग्रामोद्योगों की प्रगति

भारत में अंग्रेजी राज्य के पश्चात् देश के ग्रामीण उद्योग धंधों का क्रमशः ह्रास होता गया। देश के कई हिस्सों में ये धंधे लगभग लुप्त ही हो गये। लेकिन जैसलमेर आवागमन के रास्तों से बहुत दूर होने के कारण यहां के कई धंधे अंग्रेजी राज्य का अन्त होने तक भी मूल रूप में रहे। जैसलमेर में ऊन, घी, नमदा और रेशों की कई झाड़ियों का आज भी विपुल उत्पादन होता है। फलतः इन वस्तुओं के उद्योग धंधे यहां जीवंत रहे और गांवों में उत्पादन होने वाली ऊन की कताई के लिए घर-घर में चरखा बराबर चलता रहा। इन उद्योग धंधों का संगठन और विकास करने के लिए जैसलमेर के कुछ उत्साही रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने 'जैसलमेर जिला खादी ग्रामोदय परिषद' नाम से एक संस्था का संगठन किया, जिसने जिले भर में अपने केन्द्र स्थापित करके इस काम को हाथ में लिया। राजस्थान खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के माध्यम से यह संस्था लगभग दस लाख रुपये की पूंजी से जिले में खादी और ग्रामोद्योगों के विकास के काम में लगी हुई है। स्थानीय देशी ऊन की सफाई, छंटाई, और पिंजाई के तरीकों में सुधार करके तथा आवश्यक यंत्रों की सहायता से उसे बढ़िया किस्म की ऊन बनाकर घर-घर में चरखे व करघे द्वारा उसकी कताई व बुनाई की जाती है। यहां की ऊन की शालें, कम्बलें, बरड़ी और पट्टू लाखों रुपये के मूल्य की बिहार और

जैसलमेर में खादी और ग्रामोद्योगों की प्रगति

भारत में अंग्रेजी राज्य के पश्चात् देश के ग्रामीण उद्योग धंधों का क्रमशः ह्रास होता गया। देश के कई हिस्सों में ये धंधे लगभग लुप्त ही हो गये। लेकिन जैसलमेर आवागमन के रास्तों से बहुत दूर होने के कारण यहां के कई धंधे अंग्रेजी राज्य का अन्त होने तक भी मूल रूप में रहे। जैसलमेर में ऊन, घी, चमड़ा और रेशों की कई झाड़ियों का आज भी विपुल उत्पादन होता है। फलतः इन वस्तुओं के उद्योग धंधे यहाँ जीवंत रहे और गांवों में उत्पादन होने वाली ऊन की कताई के लिए घर-घर में चरखा बराबर चलता रहा। इन उद्योग धंधों का संगठन और विकास करने के लिए जैसलमेर के कुछ उत्साही रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने 'जैसलमेर जिला खादी ग्रामोदय परिषद' नाम से एक संस्था का संगठन किया, जिसने जिले भर में अपने केन्द्र स्थापित करके इस काम को हाथ में लिया। राजस्थान खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के माध्यम से यह संस्था लगभग दस लाख रुपये की पूंजी से जिले में खादी और ग्रामोद्योगों के विकास के काम में लगी हुई है। स्थानीय देशी ऊन की सफाई, छंटाई, और पिंजाई के तरीकों में सुधार करके तथा आवश्यक यंत्रों की सहायता से उसे बढ़िया किस्म की ऊन बनाकर घर-घर में चरखे व करघे द्वारा उसकी कताई व बुनाई की जाती है। यहां की ऊन की शालें, कम्बलें, बरड़ी और पट्टु लाखों रुपये के मूल्य की बिहार और

दुकान में जाती है जो विभिन्न खादी भंडारों के द्वारा बिकती है।
जैसलमेर नगर में भी दो बड़े खादी भण्डार हैं, जहाँ से वर्ष भर में एक
लाख रुपये की ऊनी और सूती खादी की बिक्री होती है। जिले में पोक-
रण, रामदेवरा, सांवता, रामगढ़, लाठी, भेलड़ा, शिवनगरसी, गुहड़ी,
सर, म्याजलार, मुंहाला, राजगढ़, कबीरबस्ती, मथा आदि को मिला-
कर कुल पन्द्रह स्थानों पर संस्था के केन्द्र हैं, जहां वर्ष भर में पांच
लाख रुपये की ऊनी खादी का उत्पादन और बिक्री होती है। ये केन्द्र
जिले के करीब १०० गावों से सम्बन्धित हैं जहां प्रत्यक्ष में चरखे च
रखे चलते हैं।

जैसलमेर से चालीस मील उत्तर पश्चिम में सोया और पारेवर
गांव के पास परिषद ने बुनकरों और चमारों की एक नई आदर्श बस्ती
बसाई है जहां २०-२५ परिवार रहते हैं। सुधरे हुए औजारों और
विशेष व्यवस्था से परिषद ने इस केन्द्र पर जो ऊनी खादी के उत्पादन
का संगठन किया है, उसने इस जिले को बढ़िया किस्म के सुन्दर और
मजबूत ऊनी शालों के उत्पादक के रूप में विख्यात कर दिया है। परि-
षद ने संस्था के उपयोग के लिये बस्ती में तीस हजार रुपये की लागत
से गोदाम, कार्यकर्ता निवास, बुनकर शेड तथा चर्म कुण्डों का निर्माण
किया है। यहां पर स्कूल भवन भी है जिसमें दिन में बस्ती के बच्चों
को पढ़ाया जाता है और रात के समय प्रौढ़ शिक्षण चलता है। मनो-
रंजनार्थ यहां रेडियो तथा कुछ वाद्य यंत्र भी रखे गये हैं। बस्ती में तीन
सहकारी समितियां हैं जिनमें से एक बुनकरों की, एक चमारों की तथा
एक पूरे गांव की है। तीनों समितियां जिला खादी परिषद के [illegible]

दर्शन में क्रमश: खादी उत्पादन, चर्मोद्योग का उत्पादन करती और एक सहकारी भण्डार चलाती है।

खादी कार्य के अलावा परिषद् चर्मोद्योग, अखाद्य तेलों के साबुन और कताई बुनाई के साधनों का भी उत्पादन करती है। ऊनी खादी की रंगाई, मलाई आदि करने की भी परिषद् के पास अपनी व्यवस्था है। ऊनी हौजरी का भी अच्छा उत्पादन किया जाता है। नगर के उत्तरी भाग में परिषद् का एक विशाल भवन है जिसमें उपरोक्त सभी प्रवृतियां चलती है और परिषद् का प्रधान-कार्यालय भी इसी भवन में हैं।

परिषद् का संचालन करने के लिए प्रान्त और जिले के कर्मठ, निष्ठावान और अनुभवी कार्यकर्ताओं का एक संचालक मण्डल बनाया हुआ है, जिसके सदस्य नीचे लिखे हैं :—

(१) सर्वश्री तुलसीदास राठी-अध्यक्ष, (२) भगवानदास माहेश्वरी-उपाध्यक्ष, (३) ताराचन्द जगाणी-मन्त्री, (४) गोवर्धन कल्ला-सहमन्त्री (५) गोकुलभाई भट्ट-सदस्य, (६) लीलाधर व्यास-सदस्य, (७) बालकृष्ण थानवी-सदस्य, (८) सत्यदेव व्यास-सदस्य, (६) माणकचन्द बोहरा-सदस्य, (१०) रामचन्द्र पालीवाल-सदस्य, (११) जेठमल मालपानी-सदस्य, (१२) कुन्दनलाल दलाल-सदस्य, (१३) गंगासिंह मोहता-सदस्य, (१४) खुशालाराम मेघवाल-सदस्य।

प्रशासकीय दृष्टि से जैसलमेर

प्रशासकीय दृष्टि से जैसलमेर जिले का ढांचा निम्नलिखित रूप प्रस्तुत किया जा सकता है।

जिला— जैसलमेर

सब डिविजन— जैसलमेर और पोकरन

तहसील— जैसलमेर

सब तहसील— रामगढ़ सम, नाचना

पंचायत राज का प्रारंभ होने के पश्चात वर्तमान मे जैसलमेर जिले मे निम्नलिखित पंचायत समितियाँ कार्य कर रही है। इन पंचायत समितियों के कौन-कौन प्रधान चुने गये हैं और प्रत्येक के अधीनस्थ कितनी पंचायते हैं, उनकी तालिका इस प्रकार है।

क्रम संख्या	नाम पंचायत समिति	अधीनस्थ पंचायत केन्द्र	प्रधान का नाम
१.	जैसलमेर	देवा, २. नेड़ाई, ३. मुल्ताना, ४. पारेवर, ५. काठोड़ी, ६ मादासर, ७. रूपसी, ८. डाभला, ९. बडोड़ा गांव, १०. अमरसागर, ११. मोहनगढ़, २. बासाना, १३. बाहला, १४ सोढा-कंवर, १५. धांधन, १६. सूजा, १७ कणोद, १८ हमीरा, १९. भू, २०. पिथला, २१. नोख, २२. छोनू, २३. मासकंदरा, २४. अवाय, २५. नाचना, २६. पंचो	श्री सोहनसिंह रावलोत

		का तला, २७. सतयाय, २८. टावोरियों वाला, २९, खेरांवाला, ३०. भारेवाला ।	
२.	सम मुख्यालय जैसलमेर	१. सम, २. कनोई, ३. दामोदरा, ४. वीदा, ५. लूणार, ६. डेढा, ७. खूहड़ी, ८. बरसीयाला, ९. भ्याजलार, १०. सत्तों, ११. करड़ा, १२. शाहगढ़, १३. तेजरावा १४. हरनाऊ, १५. रामा, १६. सांगड़, १७. डांगरी, १८. कपूरिया, १९. भाडली, २०. भिझनियाली, २१. मोढा, २२. वईया, २३. कूंडा, २४. छतागढ, २५. अड़वाला, २६. चेलक, २७. देवड़ा, २८. कोटड़ी, २९. नरसींगों की ढांणी, ३०. देवीकोट, ३१. मूलाना, ३२. रासला, ३३ रीवड़ी, ३४. तेजमालता, ३५. रामगढ, ३६. सोनू, ३७. राधवा, ३८. तेजपाल, ३९. भूटोवाला, ४०. किसनगढ़, ४१. तनोट, ४२. लोंगवाला, ४३. कोलूतला, ४४. खुइयाला, ४५ बांधा, ४६ हाबूर,	श्री रामचंद्र पालीवाल
३.	साकड़ा मुख्यालय पोकरन	१. साकड़ा, २. लोहारकी, ३. माडवा, ४. भणियाणा, ५. खेतोलाई, ६. लवां, ७. रामदेवरा, ८. दोतले, ९. फलसूंद,	श्री गुलाबसिं रावलोत

१०. नेहान, ११ राजमऊ, १२ मोक,
१३. धांधेवा, १४ मूलाश्ला, १५ केराबा,
१६ बारट का गांव, १७. छायण,
१८ रामडिया, १९. राजमथाई
२० भिणोनाई, २१. भंगडा, २२ ऊमला,
२३. डाबरा २४ लाठी।

ट्यूब वेल

जैसलमेर जिला सदैव से जलाभाव के कारण पिछड़ा हुआ रहा है। यहाँ के अधिशासकों ने इस समस्या के समाधान हेतु कभी विचार ही नहीं किया। फलस्वरूप यहाँ के निवासी धीरे-धीरे भारत के विभिन्न भागों में जाकर बस गये।

परन्तु आजादी के पश्चात इस क्षेत्र का भी काया पलट हुआ और भू गर्भ में पड़े अनेकों जल स्रोतों का पता लगाया गया। सौभाग्य से उत्तरी भारत का सर्व श्रेष्ठ जलकूप जैसलमेर के चांधन गांव में मिला। यह जलकूप ६० हजार गेलन पानी प्रति घंटे के हिसाब से दे रहा है। इस ट्यूब वेल के अतिरिक्त इस जिले में निम्नलिखित ट्यूब वेल जिन गावों में है उनकी तालिका नीचे दी जा रही है :—

१. भागू का गांव १ २. भोजका, १ ३. भेरवा १ ४. मोढा धोर २ ५. लाठी १ ६. जेठा १ ७. बडोड़ागाव १ ८. पायमर. १ ९. करमों की ढाणी १

उक्त जलकूपों के पास की जमीन तत्रस्थ किसानों को सहकारी समितियाँ बनाकर खेती हेतु दे दी गई है। इन खेतों में गेहू, सरसों,

बाजरा, चना, उगाया जा रहा है। आगे उपज बढाने का कार्य भी गतिमान है।

समग्र जिले के निवासियों को पीने का पानी सुलभ करने हेतु भी सरकार ने सोनू, डाभला और फतेगढ में जलकूप स्थापित कर दिये हैं। वर्तमान में डाभला जलकूप से जैसलमेर नगर तक पानी लाने की योजना पूर्ण हो चुकी है।

इन ट्यूब वेलों के अतिरिक्त अन्य अनेक जलकूप और स्थापित करने का कार्य चल रहा है। प्रमुख जलकूप जिन गावों में होंगे उनके नाम निम्नलिखित है।

१. मयाजलार २. खुइयाला ३. मोकला ४. देवड़ा ५. झिझनयाली ६. डांगरी ७. माडवा ८. वरदाना ९ लोहारकी १० अंटा ११. अजासर १२ सांकड़ा १३. भेंसड़ा १४. डांगरी १५. जालूवाला १६. भारा वाला १७. घंटयाली १८. अवाय १९. टावोरीवाला २० पन्ना २१. रातड़िया २२. लवां आदि आदि।

अगर इन समस्त जलकूपों के निकट की जमीन कृषकों को सहकारी समितियाँ बनकर दी गई तो देश में अन्न का उत्पादन तो बढ़ेगा ही साथ ही यह क्षेत्र भी आबाद और हरा-भरा बन जायगा।

मान्य विद्वानों की सम्मतियां

जैसलमेर के जैन भण्डार देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। जिस तरह प्राचीन ग्रन्थों को सुरक्षित रखने का प्रयत्न जैनों ने यहाँ किया है वह देखने ही योग्य है। उनकी सूची भी बनाई गई है और बन रही है, उनमें से अप्रकाशित ग्रन्थों का प्रकाशन भी आवश्यक है और होना चाहिए। जैनसाहित्य बहुत बड़ा और उत्कृष्ट है। बहुत ग्रन्थ अप्रकाशित हैं। प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी उनके ही प्रकाशन का काम कर रही है। आशा है यहाँ के ग्रन्थों की ओर भी उसका ध्यान अवश्य जायगा। पत्थर की कारीगरी भी बहुत सुन्दर है।

स्व० डा० राजेन्द्रप्रसाद

आज मैं पहलीबार जैसलमेर आया और जैन-मंदिर भी देखने गया। वहाँ का पत्थर का काम और मूर्ती बहुत सुन्दर है और पुराने ताड़पत्र पर लिखी हुई पुस्तकें बहुत सारी हैं।

इस बात की आवश्यकता मालूम होती है कि इन सब की ठीक जाँच की जावे।

जैसलमेर की ओर हमारा अधिक ध्यान होना चाहिए।

स्व० श्री जवाहरलाल नेहरू

जैन मंदिर की कलापूर्ण मूर्तियों का सौन्दर्य और ताड़ पत्रों की पुस्तकों की प्राचीनता जैसलमेर को आकर्षक बनाती है।

स्व० श्री जयनारायण व्यास

जैनमंदिर के दर्शन कर; वहाँ की पत्थर की खुदाई की कला देखकर बहुत हर्ष हुआ। शायद भारत में इतनी सुन्दर और कलात्मक खुदाई अन्य किसी स्थान पर नहीं होगी।

सेठ गोविन्ददास एम पी.

जैसलमेर नगरी उजड़ हो जाने पर भी अपनी शोभामय विशेषता रखती है। जैनमंदिर की स्थापत्यकला पत्थर की सौन्दर्य सृष्टि और अलभ्य सुरक्षित ग्रन्थलिपि मन को मुग्ध करती और हृदय में गर्व का अनुभव करती है।

पूर्णचन्द जैन

जैसलमेर के ज्ञानभंडार की होड करने वाले भंडार भारत में नहींवत् है। ऐसी संस्था को आगे बढ़ाना प्रत्येक भारतवासी का कर्तव्य हो जाता है।

जैन मंदिरों की कारीगरीं अनुपम है।

गोकलभाई भट्ट

मुझे जैसलमेर के ऐतिहासिक नगर में इस उच्चतम कला सौन्दर्य और ज्ञान भण्डार को देखकर अत्यन्त हर्ष हुआ।

सतीशचन्द्र

संसार की अन्य अद्‌भुत वस्तुओं में यह अद्‌भुत स्थान है कि जिसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी।

डा. ए. वाई. गूर (रोम)